फ़ेसबुक के
अब्बाजान

तन्ज़ ओ मज़ाह

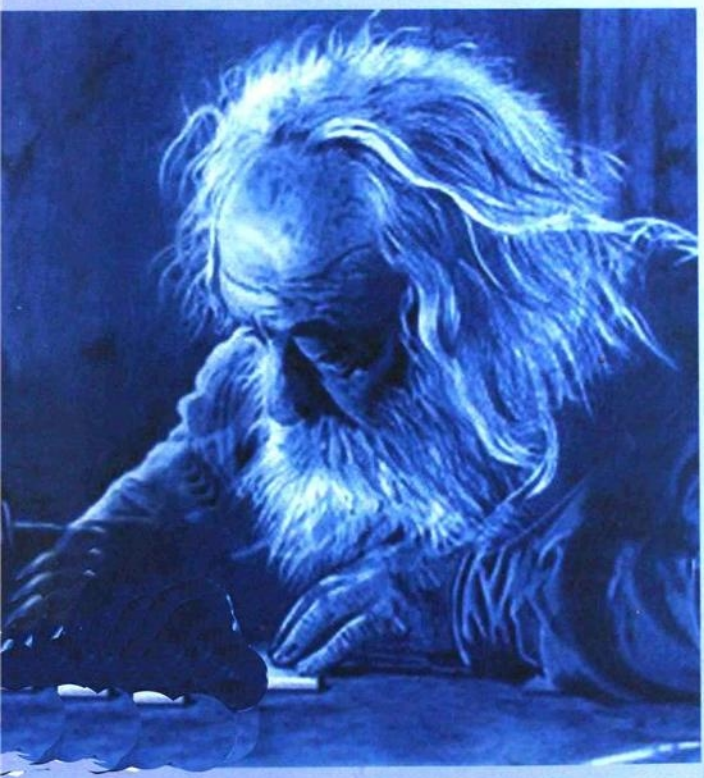

सालिम शुजाअ अन्सारी

'फ़ेसबुक' के
अब्बाजान

शायिरी (तंज़ ओ मिज़ाह) हास्य व्यंग

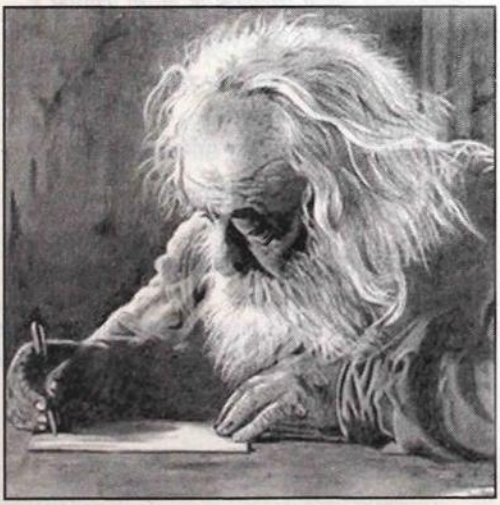

सालिम शुजाअ अन्सारी

भी अन्य शायिर नहीं कह पाये,इस लिए'अब्बाजान' जिस शै का नाम है उसकी रूह इन महान शायिरों में कहीं न कहीं झांकती नज़र आती है.....हम बयाबाँ में हैं और घर में बहार आई है.....कह कर ग़ालिब 'अब्बाजानी' रंग में उतरते है और..... अपना शेवा कजी नहीं यूँ तो,यार जी टेढ़े बाँके हम भी हैं.....कह कर मीर तक़ी मीर भी इस मूड को जी चुके हैं। कहने की ज़रूरत नहीं कि.....बे पर्दा नज़र आई थीं कल चन्द बीबियाँ.....जैसे सृजन पर आज हम अकबर इलाहाबादी को 160 बरस बअद भी याद करते हैं , आप अवाम की शिरिस्त को पहचानें तो ये रंग वो है जिसकी उसे बेसाख़्ता दरकार है और शायद 'अब्बा जान'के रूप में हमें अपने दौर का अकबर मिल गया है।आप अदब की रसाई का दायरा कहाँ तक समझते हैं सिर्फ़ अदीबों तक,सिर्फ़ नशिस्तो तक, या अवाम तक आम आदमी तक, मेरा ख़्याल है कि आप में से 99 फ़ीसदी इस दायरे की वुसअत आम आदमी तक देखना चाहेंगे। सालिम शुजा' और 'अब्बाजान' के यहाँ मुअजज़ा यही है कि शाख़ दरख़्त से भी ऊपर चली गई है और 'अब्बाजान"सालिम शुजा' के साथ.....वो मेरा आईना है या मैं उसकी परछाई हूँ.....मेरे भीतर ही रहता है मेरे जैसा जाने कौन..... की श्रेणी में खड़े नज़र आते हैं और इसका पूरा श्रेय सालिम शुजा अन्सारी साहब को जाता है।

'अब्बाजान' .....दुनिया में 'माँ' लफ़्ज़ के बअद सबसे ज़ियादा आदरर्णीय और जज़्बाती ओहदा है और हैसियत बाप की होती है,इस लिए 'अब्बाजान' शब्द हमारी चेतना में आदर , रहबरी, रिवायत और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना जगाता है, लेकिन यदि कोई "Virtual Character" इस किरदार को आपके अदबी दायरे में रहस्य और गुम नामी की सम्त से प्रकट होकर बाक़ायदा पूरी शिद्दत से निभाने लगे तो आप इसे सौभाग्य समझिए और इस सौभाग्य को सुरक्षित रखने के जतन भी कीजिए,..... वक़्त आ गया है 'अब्बाजान' को सहीह तौर पर पहचान लेने का क्यूँकि शायिर कलब ही नहीं अदब को भी इस किरदार की सख़्त ज़रूरत है।

सर आर्थर कानन डायल का गढ़ा हुआ अमर किरदार'शर्लाक होम्स' किसी भी वास्तविक महानायक से अधिक लोकप्रिय था। यही अपने दायरे में 'अब्बाजान' के तईं भी सच है, अगर जनाब मुहतरम सालिम शुजा अन्सारी साहब ख़ुद भी चाहें कि अपने बनाये इस किरदार में वो कोई तरमीम करें जो 'अब्बाजान' को चाहने वालों को नागवार गुज़रे तो सालिम साहब भी ख़ुद को क़ासिर महसूस करेंगे क्यूँकि यहाँ नक़्श मुसव्विर से बड़े केनवास पर जी रहा है,यहाँ सचमुच....कोसों बढ़ा हुआ है पियादा सवार से.....

मैं 'अब्बाजान' के किरदार के प्रति फ़ैनेटिक की हद तक चाहने वालों की दीवानगी देखकर सोच में पड़ जाता हूँ कि ऐसा क्या ख़ास है इस आई.डी. में जो ज़माना उमड़ा पड़ रहा है लेकिन थोड़ा गहरे उतरने पर बात समझ में आने लगती है कि आनन्द हम सब की बुनियादी आवश्यकता है इस लिए डिप्रेशन की तंज़ और बेहद संजीदगी से पगी हुई ग़ज़लों से ऊपर'अब्बाजान' की ग़ज़ल रेट की जाती है। अदब को सदा से ही दीदावर की तलाश

कुण्डलियाँ

बैठे बैठे एक दिन ,आया एक विचार
'अब्बा' तू भी कुण्डली, कह दे मेरे यार
कह दे मेरे यार, 'हुमा' को भी सुनवा दे
कुण्डलियाँ कैसे कहते हैं ये बतला दे
फिरते हैं वो तुझसे यूँ भी ऐंठे ऐंठे
हो जाऐं बेचैन खाट पर बैठे बैठे

मेरे भी इक दोस्त हैं,संजय मिश्रा 'शौक़'
अहले फ़नअहले नज़र, वो हैं अहले ज़ौक़
वो हैं अहले ज़ौक़,इधर भी इक मजनूँ है
वो कहते हैं यूँ, तो मैं कहता हूँ -यूँ है
'अब्बा' वो हैं दोस्त वही हैं दुश्मन मेरे
मैं उनका आईना, तो वो दर्पन मेरे

अक्सर पत्नी प्रेम में,पति करता है पाप
साढू से श्रीमन् कहे,साले जी से आप
साले जी से आप, सालियों से देवी जी
सास ससुर को दूध मलाई पेड़ा रबड़ी
खान पान का आता है जब कोई अवसर
मात पिता सो जाते हैं भूके ही अक्सर

ग़ज़ल

हो नहीं पाते इकट्ठे यार 100
हैं मगर 'बज़्मे सुख़न' में चार 100
गर युँही जारी रहा ये सिलसिला
एक दिन हो जाएँगे 100 बार 100
प्यार किस किस पर लुटाएँगे 'वहाब'
इक अनार और उस पे हैं बीमार 100
एक मअशूक़ा पे 100 आशिक़ निसार
एक कश्ती के लिए पतवार 100
ख़ैरख़्वाहे बज़्म 100..100 ख़ामख़्वाह
क़ारयीं 100 शायर ए ख़ुद्दार 100
डगमगा जाए न मीज़ाने ग़ज़ल
300 मअसूम तो अय्यार 100
बढ़ के इक से एक तीर अन्दाज़ है
पल में कर दें तीर दिल के पार 100
खुल गऐ हैं शायिरी के नाम पर
शहरे इन्टरनेट मैं बाज़ार 100
ऐसे भी उस्ताद मिलते हैं यहाँ
100 रुपे में बेच दें अश्आर 100
जो करें बेइज़्ज़ती 'अब्बा' तिरी
ऐसे बच्चों में तू जूते मार 100

(फ़ेसबुक 'बज़्मे सुख़न' के 400 मेम्बर होने पर)

ग़ज़ल

मुख़्तसर सी उम्र के अदवार 100
आदमी की ज़ात में असरार 100
अहले फ़न का है गिरेबाँ धज्जियाँ
अहमक़ों के हैं गले में हार 100
रूह की क़ायम रही पसमाँदगी
जिस्म पर लटके रहे ज़ुन्नार 100
कूचा ए जानाँ में चलना है मुहाल
हर क़दम पर चुभ रहे हैं ख़ार 100
मुश्किलों से किस ने पाई है निजात
एक दिल है और हैं आज़ार 100
एक तकमीले तमन्ना के लिए
लब पे थे तक़दीर के इन्कार 100
किस ने छेड़ा साज़े दिल मिज़राब से
झनझना उट्ठे हैं दिल के तार 100
ज़र्बे नफ़रत एक भी है नागवार
प्यार में दिल पर सहेंगे वार 100
किस लिए महरूमी ए गुल का गिला
ज़िन्दगी बाक़ी तो फिर गुलज़ार 100
देख कर 'अब्बा' को ये कहना पड़ा
एक शायिर, और हैं किरदार 100

हिन्दी ग़ज़ल

कैसा स्वर कैसा स्वर नाद
मन से मन का है संवाद
जैसी श्रद्धा वैसा श्राद्ध
"जो चाहे - कर दे इमदाद"
भक्त की ड्योढ़ी पर भग्वान
मांग रहा है आशिर्वाद
बाहर बाहर बुद्धिमता
भीतर भीतर इक अवसाद
जीवन दलदल एक समान
ऊपर जल तो नीचे गाद
अमृत ,विष दोनों निर्दोष
अपना अपना सबका स्वाद
मन्दिर, मस्जिद शाँत हैं क्यूँ
उत्सुक्ता में है उन्माद
मैं छोटा हूँ, आप बड़े
अब काहे का वाद-विवाद
'अब्बा' तू तरु है निर्जीव
कौन तुझे दे पानी खाद

ग़ज़ल

क़दम क़दम पे मिलेंगे ख़ुशामदी मुख़्लिस
हमारे चारों तरफ़ हैं दिखावटी मुख़्लिस
न आना घर मिरे हरगिज़ ए लक्ज़री मुख़्लिस
तुझे कहाँ से पिलाऊँगा बिस्लरी मुख़्लिस
हुए हैं शेख़ो बरहमन फ़रेब के पुतले
न अब हैं पादरी सच्चे न मौलवी मुख़्लिस
घुसेड़ देंगे बदन में जो मिल गया मौक़ा
छुपाए रहते हैं हाथों में अब छुरी मुख़्लिस
जनाज़े उठ गये हर शहर से तमद्दुन के
मिले न लखनऊ तक में रिवायती मुख़्लिस
लगा के आग महकते हुए गुलिस्ताँ में
बड़े सुकूँ से बजाते हैं बाँसुरी मुख़्लिस
बसद ख़ुलूस नचाते हैं अपनी उँगली पर
बिना पगार कराते हैं नौकरी मुख़्लिस
ख़ुदाया ख़ैर हो अब फिर से क़र्ज़ माँगेंगे
लगा रहे हैं मिरे दर पे हाज़िरी मुख़्लिस
खिलाया कीजिए मिट्टी के बर्तनों में इन्हें
चुरा भी सकते हैं घर की क्रॉकरी मुख़्लिस

भगा के ले गया खुद अपने दोस्त की बीवी
कि यूँ निबाह गया अपनी दुश्मनी मुख़्लिस
हर एक शख़्स को घुसने न दीजिए घर में
करा न दें कहीं बस्ती में किरकिरी मुख़्लिस
इसी लिए तो है घर घर तलाक़ की नौबत
न अब पुरुष ही समर्पित,न स्त्री मुख़्लिस
खुद अपने साये से इन्साँ को ख़ौफ़ लगने लगा
कि पैदा होने लगे जब से मतलबी मुख़्लिस
जिसे सुलाया था मेहमाँ बना के बिस्तर पर
लपेट ले गया 'अब्बा' की वो दरी मुख़्लिस

रुबाई

ज़िन्दा हूँ मैं जब तक ये बदन कौंचेंगे
लाशा मिरा नाखुन से यही नौंचेंगे
शागिर्द मिरे इतने हैं लायक़ 'अब्बा'
"तस्वीर के आँसू भी नहीं पौंछेंगे"

ग़ज़ल

वहम है या कोई गुमान है तू
या हक़ीक़त में 'अब्बाजान' है तू
तेरी पहचान लाख फ़र्ज़ी हो
फिर भी शायिर कोई महान है तू
लुत्फ़ लेता है एक इक पल का
इस लिए आज तक जवान है तू
तू हैं शायर कलब' का रूहे रवाँ
बज़्मे शअरो सुख़न की जान है तू
तू है इल्मे अरूज़ से वाक़िफ़
अहले फ़न का भी क़द्रदान है तू
जोत देता है सँगलाख़ ज़र्मी
जैसे शायिर नहीं किसान है तू
रंग बदला है तूने महफ़िल का
बुज़ला संजी में कामरान है तू
तन्ज़ करता है सब पे हँस हँस कर
कैसे मानूँ कि बे ज़बान है तू

सारे लोगों का तू मुहिब्बी है
सारे लोगों पे महरबान है तू
तेरा मस्कन बने हैं दिल सबके
सबके दिल में विराजमान है तू
क़स्रे शाही तू होगा कल लेकिन
आज टूटा हुआ मकान है तू
अब्बा जैसी नहीं है उम्र तिरी
फिर भी 'अब्बा' पिता समान है तू

रुबाई

चहरे से तो हज़रत हैं बड़े रॉयल से
बातें भी किया करते हैं स्टायल से
उस्ताद हैं, लेकिन है तख़ल्लुस 'अब्बा'
मअलूम हुआ उनकी प्रोफ़ायल से

रुख़्सते रमज़ाँ

करके फिर बारयाबी ए रहमत
माहे रमज़ान हो गया रुख़्सत
ख़ूब आई थी रहमतों की बहार
ख़ूब बरसी थी नेअमतों की फ़ुआर
साल भर जो न हाथ आते थे
माहे रमज़ाँ में फल वो खाते थे
रोज़ सजता था घर में दस्तरख़्वान
रोज़ बनते अलग अलग पकवान
क्या पकौड़े,समोसे, क्या भजिये
चुर्रियाँ, पापड़ों की क्या कहिये
खीर, ज़र्दा, पुलाओ, बिरयानी
रब ने की रिज़्क़ की फ़रावानी
औरतों के अजीब तैवर थे
काम मर्दों से उनके हटकर थे
रात के सह पहर में ही उठना
हस्बे मअमूल काम सब करना
दिन में करना है कुछ इबादत भी
और क़ुरआन की तिलावत भी

एक एक चीज़ का ख़्याल रहा
ग़म ओ ग़ुस्से में एतदाल रहा
शाम को फ़िक्रे नज़्मे अफ़्तारी
रात को ईद की ख़रीदारी
मर्द फ़िक्रे निजात करते थे
एहतिमामे ज़कात करते थे
दुख यतीमों का सब बंटाते थे
मालो असबाबो ज़र लुटाते थे
बाज़ रहते थे लोग 'बाज़ी' से
बे नमाज़ी भी थे नमाज़ी से
पँजवक़्ता जबीं झुकाते थे
हुक्म अल्लाह का बजाते थे
कितनी रौनक़ थी, कितनी खुशहाली
एक मस्जिद भी थी नहीं ख़ाली
हर नफ़्स सब्र था क़नाअत थी
जिस्म की रूह की तहारत थी
सिर्फ अल्लाह की रज़ा के लिए
सबने रोज़े रखे ख़ुदा के लिए
अब हुए ख़त्म सहरी ओ अफ़्तार
'अब्बा' क़ायम रहे यही किरदार
आज 'शैतान' हो गया आज़ाद
आपको ईद की मुबारकबाद

है इसलिए जब ये चमन बे नूर होता है तो अहले नज़र की ज़रूरत भी बढ़ जाती है, लिहाज़ा 'अब्बाजान' अपने दौर में सहीह समय पर उठ खड़ा हुआ सहीह किरदार है, जिसकी दौरे हाज़िर को सख़्त ज़रूरत है, तीसरी बात हमारी पारिवारिक सोच अपने पहले रहबर को अब्बा या पिता के रूप में देखती है। शायिर कलब को भी रहबर चाहिए था जिसकी ज़रूरत 'अब्बाजान' ने पूरी की, और वो इस पूरे परिवार को साथ लेकर चले भी.....

'सालिम' तिरे कलाम की अब क्या मिसाल दूँ
हैरत ज़दा हैं सब तिरे अश्आर देखकर
उस्ताद भी दबाते हैं दाँतों में उँगलियाँ
'संजय' तुम्हारी ग़ज़लों का मअयार देखकर
'आदिक' तुम्हारे फ़न का मैं क़ायल हूँ इस क़दर
मिलता है चैन तुमको मिरे यार देखकर
तल्ख़ी तिरे कलाम की भाने लगी 'हुमा'
मोहित हुआ हूँ मैं तिरा व्यवहार देखकर
'सरवत' कई दिनों से नज़र आ नहीं रहे
हर शख़्स खुश है उनको तड़ीपार देखकर

'अब्बाजान' की ताक़त है शऊरी नज़र, सालिम शुजा में पिन्हा उस इन्सान का अरूज़ जो कि उन्ही की सिरिश्त से उपजा शहकार है जो उन पत्थरों में अर्से से तड़प रहा था जिन्हें अदब की बन्दिशें, रिवायत या तन्क़ीद तब्सिरा वग़ैरह वग़ैरह कहा जाता है, आप एक मुक़ाम पर पहुँच चुके हैं जिसका मरतबा है, यहाँ आपकी शायिरी एक ख़ास रंग और मअयार के कारण पहचानी जाती है। वहीं आपके भीतर एक और किरदार भी पूरी शिद्दत से तारी है जो कि आपकी अदबी पहचान से बिल्कुल मुख़तलिफ़ है और उसको सामने लाने में आपकी अभी तक की अर्जित की हुई पहचान को भी ख़तरा है, इसलिए 'अब्बाजान' भी पूरी अहतियात के साथ शायिर कलब में हमारे बीच आए, उनके हल्के फुल्के लेकिन बेहद गहरे बयानात इस कलब की ज़ीनत बन गए, उनकी फ़िलबदीह कहने की क्षमता ने सब को हैरत में डाल दिया और उनकी शऊरी नज़र इस कलब की जान बन गई। आज सूरत ये है कि 'अब्बाजान' चश्मो चराग़ हैं और उन्हें आगे के लिए महफ़ूज़ रखना है क्यूँकि वो इस दौर का सबसे मुश्किल काम अन्जाम दे रहे हैं–सबसे मुश्किल काम यअनी लोगों को हँसाना। लेकिन उनकी संजीदगी भी कमाल की है।

अहले फ़न का है गिरेबाँ धज्जियाँ अहमक़ों के हैं गले में हार 100
रूह की क़ायम रही पसमाँदगी जिस्म पर लटके रहे ज़ुन्नार 100
कूचा ए जानाँ में चलना है मुहाल हर क़दम पर चुभ रहे हैं ख़ार 100
एक तकमील ए तमन्ना के लिए लब पे थे तक़दीर के इन्कार 100

ग़ज़ल

हो भी जाओ तुम इकट्ठे आठ दस
कर नहीं पाओगे मुझको टस से मस
जिस्म पर मेरे शिकंजा और कस
ए जवाँ नागिन अगर डसना है..डस
इस गुलिस्ताँ का हूँ मैं तन्हा मग़स
चूसता रहता है जो कलियों का रस
जी चुका हूँ उम्र के नव्वे बरस
हड्डियों में आज भी बाक़ी है लस
वक़्त की दीमक न लग पाई मुझे
आज भी कल की तरह हूँ जस का तस
दोस्त की ख़ातिर हूँ इक खिलता गुलाब
और दुश्मन के लिऐ हूँ कैकटस
रहम कैसा जंग के मैदान में
खाऊँ क्यूँ मद्दे मुक़ाबिल पर तरस
जाने किस का स्क्रू ढीला मिले
हाथ में रखता हूँ हर दम पेचकस
लिपटे हैं शागिर्द मुझ से इस तरह
जैसे कम्प्यूटर से कोई वायरस

मिट चुकी हैं दिल की सारी हसरतें
फिर भी जाने क्यूँ फड़क जाती है नस
फड़फड़ाते हैं कबूतर क़ैद में
खोल दे सय्याद अब तो ये क़फ़स
नाख़ुदा को ताव जब भी आ गया
कश्तियाँ चिल्ला उठीं लिल्लाह बस
बढ़ गई है इश्क़ में आलूदगी
प्यार क्या है सिर्फ़ जिस्मों की हवस
या इलाही हो न तन्हाई नसीब
एक लैला और मजनूँ आठ दस
प्यार में थोड़ा तहम्मुल चाहिये
आज NO बोला है कल बोलेगी YES
हँसने दो इस आशिक़ नौ मश्क़ को
एक दिन हो जाएगा ख़ुद SERIOUS
फ़ायदा ग़ल्ला उगाने में नहीं
बोइये खेतों में अब अपने चरस
हम पियें तो सब कहें ये है शराब
वो पियें तो सब कहें है सोमरस
डैडी मम्मी का रखो बच्चो ख़्याल
क्या पता ये हों न हों अगले बरस
क्यूँ दिखा दी डर्टी पिक्चर आपने
हो गया इस उम्र में 'अब्बा' नजस

इरशादे रसूल अल्लाह मुहम्मद स0
सुनो तुम से पहले लोग अपने नबीयों,वलियों की क़ब्रों का सजदा गाह बना लिया करते थे,
ख़बरदार ! तुम क़ब्रों को सजदा गाह न बनाना, मैं तुम्हें इस से मनअ करता हूँ
मिश्क़ात शरीफ़ पेज नं. 69

पीर बाबा

इक मुहल्ले में था कोई कामचोर
रात दिन बस्ती में करता था वो शोर
ख़ुश न था उस से मुहल्ले में कोई
हरकतों से उस की आजिज़ थे सभी
बात करने का न था उसको शऊर
थी शराफ़त उस से कोसों दूर दूर
इक दिन उसके बाप ने उस से कहा
क्या करेगा ज़िन्दगी में तू... बता ?
मुफ़्त की तोड़ेगा कब तक रोटियाँ
जिस्म से नोचेगा कब तक बोटियाँ
रोज़ी रोटी का ज़रीअह ढूँड ले
कुछ तो जीने का वसीलह ढूँड ले
देखते हैं नफ़रतों से सब तुझे
शर्म आएगी न जाने कब तुझे
बोल..कब तक दूँगा तेरा साथ मैं
ज़िन्दगी कब तक है मेरे हाथ में

क्या पता कब दम निकल जाए मिरा
जाने मेरे बअद क्या होगा तिरा
सुन कर अपने बाप की वो गालियाँ
मुस्कराया, और बजायीं तालियाँ
बोला..'अब्बाजान' अब बस भी करो
मेरे मुस्तक़बिल से हरगिज़ मत डरो
मैं भी हूँ अपने लिए कुछ फ़िक्र मन्द
मेरी बेकारी के दिन हैं सिर्फ़ चन्द
चुन लिया है मैंने अपना 'रोज़गार'
आपकी बस मौत का है इन्तिज़ार
आपका जैसे ही होगा इन्तिक़ाल
ख़ुद बख़ुद हो जाएगा हल ये सवाल
आपका बनवाऊँगा मैं इक मज़ार
फिर शुरूअ अपना करूँगा कारोबार
संग ए मरमर से उसे बनवाऊँगा
'उर्स' फिर हर साल मैं करवाऊँगा
होगा फिर क़व्वालियों का एहतिमाम
मुर्ग़ बिरयानी का होगा इन्तिज़ाम
देगें दस दस आँच पर चढ़वाऊँगा
रात दिन लंगर युँही लुटवाऊँगा
आऐंगे दर पर ज़रूरतमन्द लोग
कुछ अक़ीदतमन्द दौलतमन्द लोग

जिनको होगा मेरी गुरबत का ख़्याल
बस वही मुझको करेंगे माला माल
तुहफ़े ,नज़राने ,चढ़ावे लाऐंगे
आपके दर से मुरादें पाऐंगे
पाऐगा हर शख़्स उलझन से निजात
क़ब्र पर चढ़ने लगेंगे ज़ेवरात
बाख़ुदा 'अब्बा' मुझे है ये उमीद
हर तरफ़ होंगे फ़क़त मेरे मुरीद
'पीर बाबा' का लक़ब रक्खूँगा मैं
बादशाहत के मज़े चक्खूँगा मैं
गण्डे और तअवीज़ बाँधे जाऐंगे
भूत, जिन्न, आसेब, उतारे जाऐंगे
हर मरज़ का फूँक से होगा इलाज
मेरी तअरीफ़ें करेगा हर समाज
रोज़ो शब मैं तर निवाले खाऊँगा
गाड़ियों में आऊँगा और जाऊँगा
शौहरतो दौलत भी चूमेगी क़दम
मैं भी कहलाऊँगा 'अब्बा' मुहतरम
नाम रौशन कर न पाया आप का
फिर तो मैं बेटा नहीं हूँ बाप का
मेरे हक़ में काम ये कर जाइऐ
जितना जल्दी हो सके मर जाइऐ

'संजय मिश्रा शौक़' लखनवी के लिए

ग़ज़ल

सब की करते हैं ख़ैरख़्वाही आप
क्या हैं दरवेश ख़ानक़ाही आप
फ़ैसला दे के हक़ में ग़ैरों के
लूटिये ख़ूब वाहवाही आप
टॉप फ़ाइव में चुन के बच्चों को
ख़ूब फैलाइए तबाही आप
मैं ही तन्हा अज़ीम शायिर हूँ
मेरे हक़ में भी दें गवाही आप
लखनऊ के नहीं कोई नव्वाब
फिर भी रखते हैं बादशाही आप
मेरी ग़ज़लों पे मेरा नज़्मों पर
फेर देते हैं क्यूँ स्याही आप
मन्ज़िलें कौन सी हैं नज़रों में
कौन सी राह के हैं राही आप
आप को ये ख़बर नहीं शायद
'अब्बा' दारोग़ा और सिपाही आप

शायिर कलब

फ़ेसबुक पर मेहफ़िले शेअरो अदब
लोग कहते हैं जिसे 'शायिर कलब'
'हादी जावेद' इसके हैं रूहे रवाँ
उनकी कोशिश से सजा ये गुलसिताँ
हर तरह के इस चमन में फूल हैं
चन्द हैं गुमनाम, कुछ मक़बूल हैं
सैंकड़ों उदबाओ शुअरा हैं यहाँ
सब के सब हैं आशिक़े उर्दू ज़बाँ
हैं बुज़ुर्ग उस्ताद 'फ़ारूक़ी शमीम'
मुअतबर जिनका सुख़न ग़ज़लें क़दीम
हैं अलीगढ़ के 'रईस उद्दीं रईस'
शायिरी जिनकी है उम्दा और नफ़ीस
एक साहिब 'संजय मिश्रा शौक़' हैं
वो मुफ़क्किर,फ़लसफ़ी,पुरज़ौक़ हैं

आबरू ए शायिरी 'सालिम' भी है
और अवस्थी जैसा इक आलिम भी है
इक सुख़नवर नाम है अब्दुल वहाब'
शायिरी करते हैं हज़रत लाजवाब
एक साहिब और हैं 'सरवत जमाल'
जिनका दामन है अदब से मालामाल
ख़ुशबयाँ शायिर हैं इक 'साहिल सुनील'
और इक शायिर हैं 'नुअमानी अक़ील'
एक पाकिस्तान के हैं 'शेख़ अमीन'
और वहीं के 'सैय्यद अन्सर' दिलनशीन
एक हैं फ़नकार 'आज़म डाक्टर'
हैं अरूज़ी और शायिर मुअतबर
मुहतरम मसऊद जो 'हस्सास' हैं
जो कहीं मुल्के 'क़तर' के पास हैं
एक हैं उस्ताद 'आदिक भारती'
और इक मसऊद भाई 'जाफ़री
एक हैं 'हृदेश शुक्ला जी हुमा'
मुन्फ़रिद उनके हैं अन्दाज़ो अदा
कर रहे हैं जो ग़ज़ल को ख़ुश लिबास
ऐसे ही शायिर हैं इक 'शर्मा विकास'
इक तरफ़ 'सज्जाद अख़्तर' का ख़्याल
इक तरफ़ ऐजाज़ मन्ज़र' का कमाल

एक कुहना मश्क़ हैं 'क़ाज़ी नवेद'
और इक नौमश्क़ हैं 'अख़्तर जुनेद'
'सीमा गुप्ता' हैं 'श्रद्धा जैन' हैं
रूह की तस्कीन ,दिल का चैन हैं
दिलनशीं 'मुमताज़ नाज़ाँ' का सुख़न
हैं 'सिया सचदेव' शम्अे अन्जुमन
'मीनू मन्सूरी' ग़ज़ल की माहिरा
और 'अवनि अस्मिता' इक शायिरा
और भी हज़रात बाक़ी हैं अभी
तज़किरे में आ नहीं पाए सभी
जैसे जैसे नाम याद आते गए
नज़्म में मेरी जगह पाते गए
बिलयक़ीं पेशे नज़र है इख़्तिसार
नज़्म को कहना पड़ेगा क़िस्तवार
दिल दुखा हो जिनका मेरी ज़ात से
मअज़रत करता हूँ उन हज़रात से
अपने मुँह से अपनी क्या तअरीफ़ हो
बेसबब अहबाब को तकलीफ़ हो
मेरा अपना तज़किरा ....कोई नहीं
'अब्बा' जैसा दूसरा.....कोई नहीं

ग़ज़ल

कोई भी मुझ से ज़ियादा फ़आल क्या होगा
मिरे सिवा कोई 'माई का लाल' क्या होगा
उसे ख़्याले ख़ुशी और मलाल क्या होगा
जहाँ पे दिल ही नहीं एतदाल क्या होगा
जब इस बुढ़ापे में मेरा ये हाल है 'हादी'
तो फिर ये सोचो जवानी में हाल क्या होगा
ये किस से देने लगे तुम मिरी मिसाल 'वहाब'
मिरे मुक़ाबिले 'सरवत जमाल' क्या होगा
वो ख़ुद तो करते नहीं अपनी ज़ात की परवा
तो 'संजय शौक़' को मेरा ख़्याल क्या होगा
जो दिन मिला है उसी को निचोड़ लो 'आदिक'
किसे ख़बर है भला अगले साल क्या होगा
चुरा तो लाए पड़ोसी के घर से तुम बकरा
मगर 'अमीम' ये बकरा हलाल क्या होगा
हों जिस कलब की नई एडमिन 'सिया सचदेव'
तो इस से बढ़ के कलब का ज़वाल क्या होगा
वो हक़ जो 'ग़ालिबे ख़स्ता' कभी न ले पाए
हमारे हक़ में भला वो बहाल क्या होगा
ये इक सवाल तो हल कर दिया है 'अब्बा' ने
सवाल ये है कि अगला सवाल क्या होगा

रख यकीं है मौत का लम्हा अटल क्या पता किस वक्त आ जाए अजल
घट रही है लम्हा लम्हा ज़िन्दगी धीरे धीरे उम्र जाएगी निकल
दिल न छोटा कर मुसीबत में कभी हो सके तो मुश्किलों का ढूँड हल
फ़ैसला तब्दील भी हो जाएगा जो नज़रिया है,उसे पहले बदल
ठोकरें लगती हैं हर इक शख़्स को वो सयाना है जो जाता है संभल

हो गई है ख़त्म परदारों की भीड़ आसमाँ पर अब है तय्यारों की भीड़
इक के ऊपर इक मकाँ बनने लगे तह ब तह है आज परिवारों की भीड़
औरतें घर में अगर रहने लगें ख़त्म हो जाऐगी बाज़ारों की भीड़
इक पुराना पेड़ क्या सूखा जनाब आ गई घर तक लकड़हारों की भीड़

वो जिसको चाहे उसी को देगा, शऊर ए शअर ओ सुख़न का तुहफ़ा
उसी की महर ओ रज़ा पे है सब,उसी का है ये निज़ाम साहिब

'अब्बाजान' अपने दौर की हर बीमारी से वाक़िफ़ हैं, लेकिन कमाल ये है कि वो चारहगर भी हैं ,रहबर भी दोस्त भी और बुज़ुर्ग भी,इनको एक बार पाकर कोई खोना नहीं चाहता, लिहाज़ा मैंने ख़ुद कई बार सालिम साहब से ये गुज़ारिश की कि आप हमारी ख़ातिर इस राज़ से अब पर्दा उठाइए और..... इस सच को मन्ज़रे आम कीजिए कि 'अब्बाजान' आप ही हैं और मुझे ख़ुशी है कि मेरी बात उन्होने रखी, बक़ौल वसीम बरेलवी साहब सच्ची शायिरी वही है जो जलवतों को इख़्तियार और ख़लवतों को एतबार बना दे और 'अब्बाजान' इस पैमाने पर बिल्कुल खरे उतरते हैं, यहाँ मैं इस राज़ से पर्दा नहीं उठाना चाहता कि सालिम शुजा साहब का बयान इस दौर के किस मशहूर शायिर ने इस्लाह के नाम पर अपने नाम से मन्सूब कर लिया लेकिन जो अप्रतिम और विलक्षण प्रतिभा उनके पास है उसके क़द्रदान हज़ारों हैं,सालिम शुजा ये वो नाम है जो आज हमारे दौर की ज़रूरत है इन्हे चाहें अब 'अब्बाजान' के नाम से वो शोहरत मिले जिसके वो अर्से से मुसतहिक़ हैं या ख़ुद 'सालिम शुजा' के नाम से, लेकिन अब उनका वक्त आ गया है मुझे पूरा यक़ीन है इस कलाम के शायअ होने के बअद शायिरी की दुनिया में एक मोड़ आएगा जो दिलचस्प होगा और सालिम शुजा का नाम अमर हो जाएगा,सिर्फ़ इसी लिए ये नाम यक़ीनन अमर होने लायक़ है, मानती तो उन्हें शायिरी की दुनिया है ही–मुझे फ़ख़्र है कि मैं उनको जानता भी हूँ।मेरी हज़ारों दुआऐं और दिल की हर धड़कन अब इस किताब का शिद्दत से इन्तिज़ार कर रही है।

सारी मुहब्बत और असीमित शुभ कामनाओं के साथ.....

"मयंक अवस्थी"

हिन्दी ग़ज़ल

जिसका जैसा चरित्र होता है
उसका वैसा ही मित्र होता है
शुद्धता होती है विचारों में
आदमी कब पवित्र होता है
हर परिस्थिति में जो सुगन्धित हो
ऐसा मानस ही इत्र होता है
सुख का सानिध्य,अल्प आयामी
अन्ततः दुःख ही मित्र होता है
जब भी आओ समक्ष दर्पण के
अवतरित अपना चित्र होता है
मित्र का मित्र, बैर का कारण
शत्रु का शत्रु, मित्र होता है
दीन है जो चरित्रवान नहीं
धन तो केवल चरित्र होता है
हिन्दी, उर्दू में जो हो पारंगत
ऐसा शायिर विचित्र होता है

हिन्दी ग़ज़ल

माता -पिता को समझा है इक भार की तरह
सेवा कुपुत्र करता है उपकार की तरह

आदर नहीं है घर में वृद्धों का आजकल
सम्मान भी मिला तो तिरिस्कार की तरह

जीवन में इक समय का भी भोजन न दे सके
करते हैं मृत्युभोज भी त्यौहार की तरह

दीमक सी लग गई है जड़ों में समाज की
परिवार आज किसका है परिवार की तरह

सम्बन्ध, लाभ-हानि का आधार बन गऐ
व्यवहार आज होता है व्यॉपार की तरह

लज्जा का त्याग कर दिया नारी ने आज की
अश्लीलता भी हो गई श्रंगार की तरह

कमरों से चित्र हट गए अब देवताओं के
अभिनेता आज हो गए अवतार की तरह

'अब्बा' इलाजं करता है शब्दों से रोग का
मेरी ग़ज़ल है रोग के उपचार की तरह

ग़ज़ल

हर बज़्म में है मेरा जनाधार साफ़ साफ़
क़ायम है 'अब्बाजान' की सरकार साफ़ साफ़
रखता नहीं हूँ दिल मे किसी के लिए कपट
सब के लिए है दिल मे मिरे प्यार साफ़ साफ़
ऐनक चढ़ाए बैठे हो नफ़रत की तुम 'वहाब'
देखोगे कैसे तुम मिरा ईसार साफ़ साफ़
कुत्ते हज़ार भोंकते रहते हैं राह में
हाथी गुज़र ही जाता है हर बार साफ़ साफ़
'हादी' ज़रा रखा करो सिह्हत का तुम ख़्याल
लगने लगे हो शक्ल से बीमार साफ़ साफ़
आए हो पहली बार क्या बाज़ारे हुस्न में
टपका रहे हो मुँह से 'हुमा' लार साफ़ साफ़
कहिए 'अमीम' आपके उस्ताद कौन हैं
कहते हैं कैसे आप ये अश्आर साफ़ साफ़
'सालिम' का नाम लिखने लगी 'अवनि अस्मिता'
चेली गुरू का करती है प्रचार साफ़ साफ़
'मीनू' छुरी दिमाग़ की घिसती हैं रात दिन
ग़ज़लों में आ रही है नज़र धार साफ़ साफ़

ग़ज़ल

साबित हुए हैं वक़्त पे ग़द्दार साफ़ साफ़
जो लग रहे थे हामी ओ ग़मख़्वार साफ़ साफ़
'दरवेश' करके देखिए यलग़ार साफ़ साफ़
मैं तोड़ दूँगा आपकी तलवार साफ़ साफ़
पोशीदा असलहों से न जीतेंगे आप जंग
रखिएगा अपने हाथ में हथियार साफ़ साफ़
जी चाहे जिस तरह से भी कर लें मुक़ाबिला
है आज मेरी आपको ललकार साफ़ साफ़
तहज़ीब से उड़ाऊँगा हज़रत पराख़चे
हरगिज़ न दूँगा गाली ओ गुफ़्तार साफ़ साफ़
रखता नहीं उधार किसी शख़्स का कभी
करता हूँ मैं भी नक़्द का व्यॉपार साफ़ साफ़
है आप जिसके अब भी मुजाविर बने हुए
कर दूँगा उस मज़ार को मिसमार साफ़ साफ़
हो जाए आम आपकी 'चैटिंग' जो बज़्म में
सब देख लेंगे आपका किरदार साफ़ साफ़
चंगुल से मेरे छूट के कहते फिरेंगे आप
''इज़्ज़त हमारी बच गई इस बार साफ़ साफ़''

हिन्दी ग़ज़ल

रक्खोगे मित्रों से जो व्यवहार साफ़ साफ़
होगा सदैव स्वागतो सत्कार साफ़ साफ़
मुख में रखे रहोगे अगर गुड़ की डेलियाँ
मिलते रहेंगे हार और उपहार साफ़ साफ़
करुणा, दया, त्याग, धरम, कर्म, प्रेम,न्याय
मानव का बस इसी में है उद्धार साफ़ साफ़
मस्तिष्क भी स्वच्छ हो मन में भी शुद्धता
निकलेंगे मुख से प्रेम के उदगार साफ़ साफ़
धोका, कपट, द्वेष, व अन्याय अत्याचार
अब इन कुरीतियों का है विस्तार साफ़ साफ़
दूषित हुए मनुष्य के आचार और विचार
'अब्बा' रहेगा कैसे ये संसार साफ़ साफ़

रुबाई

गौहर जिन्हें समझा था वो पत्थर निकले
भटके हुए ख़ुद राह से रहबर निकले
जिनको मैं समझता रहा अब तक 'अब्बा'
वो तो मिरे पोतों के बराबर निकले

ग़ज़ल

रिश्ता निबाहता है मिरा यार साफ़ साफ़
करता है मुझसे इश्क़ का इक़रार साफ़ साफ़
दिल हो चुका है वस्ल को तैय्यार साफ़ साफ़
देखो तो सुर्ख़ हो गए रुख़सार साफ़ साफ़
मुद्दत के बाद उसको ज़रुरत मिरी पड़ी
कमरा भी जैसे हो गया गुलज़ार साफ़ साफ़
कुछ कुछ तो उसके दिल में भी होता ज़रूर है
करता भी कैसे वो मुझे इन्कार साफ़ साफ़
इक दूसरे को देते हम इल्ज़ाम किस तरह
था मेरे साथ वो भी गुनहगार साफ़ साफ़
कश्ती भँवर की ज़द में क्या आई ग़ज़ब हुआ
हाथों से मेरे छुट गई पतवार साफ़ साफ़
दी किसने ऐन वक़्त पे दस्तक किवाड़ पर
कोई तो कर रहा था ख़बरदार साफ़ साफ़
शुक्रे खुदा कि सरफिरा तूफ़ाँ गुज़र गया
इस पार से उतर गए उस पार साफ़ साफ़
'अब्बा'भी पास हो गए इस इम्तिहान में
''इज़्ज़त हमारी बच गई इस बार साफ़ साफ़''

ग़ज़ल

अब इस से पहले कि कर दे ये ज़िन्दगी को विदाअ
भला इसी में है कर दीजे शायिरी को विदाअ
मिरे ख़्याल से इस बार सख़्त मिस्रा है
'हुमा' भी कह देंगे शायद सुख़नवरी को विदाअ
अब आ के तोप चलाऐं ये 'तोपची' अपनी
या कर दें नाम से अपने वो 'तोपची' को विदाअ
निबाह किस तरह होगा कहो क़वाफ़ी से
ये जी में आता है कर दूँ रदीफ़ ही को विदाअ
मिरी तो मश्के सुख़न है ये बात ज़ाहिर है
जो मुब्तदी हैं वो कह देंगे शायिरी को विदाअ
विदाअ करना था 'अब्दुल वहाब' को लेकिन
'सिया' ने कर दिया 'मसऊद जाफ़री' को विदाअ
पलट के आ गए 'सरवत जमाल' महफ़िल में
न कर सकेंगे वो शायिर बिरादरी को विदाअ

ज़रूर दाल में काला है दोस्तो सुन लो
अगर ख़ुलूस से पतनी करे पती को विदाअ
यहाँ कोई नहीं महकूम आपका 'आज़म'
ज़रा मिज़ाज से कर दो कलक्टरी को विदाअ
हिला हिला के बजाता है दोनों जानिब से
मदारी कर नहीं सकता है डुगडुगी को विदाअ
पकड़ के हाथ जो ले जाए मायकें 'हादी'
मिरे ख़्याल से कर दो उस स्त्री को विदाअ
ये इख़्तियार नहीं है मुझे वगरना ...मैं
कलबसे कर ही दूँ 'सालिम' ओं' शौक़ जी 'को विदाअ
मिरे मिज़ाज में हैं बुज़ला संजियाँ शामिल
कभी मैं कर नहीं सकता हूँ मसख़री को विदाअ
जहाँ में सबको बिछड़ना है एक दिन 'अब्बा'
''सभी को कहना है इक रोज़ ज़िन्दगी को विदाअ''

क़तअह

चेली बनने लगी है 'सालिम' की
एक से बढ़ के एक मुहतर्मा
एक का नाम 'मीनू मन्सूरी'
एक है 'अवनि अस्मिता शर्मा'

ग़ज़ल

जल रहा था जो झिलमिला के चराग़
बुझ गया क्यूँ वो फड़फड़ा के चराग़

रौशनी की उमीद थी जिस से
ले गई वो 'बहू' भगा के चराग़

जब से आया है घर में इन्वर्टर
रख दिए हम ने सब उठा के चराग़

कौन देसी चराग़ को पूछे
सामने जब हों 'चायना' के चराग़

जाने कब बल्ब फ़्यूज़ हो जाए
रख लिया इस लिए बचा के चराग़

जिन्न शायद कोई निकल आए
घिस रहा हूँ हिला हिला के चराग़

भीगा रहता हूँ पेट्रौल से मैं
दूर मुझ से रखो हटा के चराग़

चल अँधेरे में चल के जलते हैं
शम्अ से बोला फुसफुसा के चराग़

आज जागा है प्यार फिर उसका
उसने फूँका है खिलखिला के चराग़

पाँव गडढे में घुस गया 'अब्बा'
हट गई वो मुझे दिखा के चराग़

THIS EBOOK IS DOWNLOADED FROM
SHAAHISHAYARI.COM

LARGEST COLLECTION OF URDU
SHERS, GHAZALS, NAZMS AND EBOOKS.

"संजय मिश्रा शौक़"
538 ख,424 ई, दीन दयाल नगर
खदरा, सीतापुर रोड़, लखनऊ

अब्बाजान (खुल गई आख़िर हक़ीक़त)

किसी भी फूल को देखकर बाग़ की मिट्टी का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है, मिट्टी की ज़रख़ेज़ी फूल की ज़िन्दगी की मुस्कान तय करती है, यअनी दोनों का रिश्ता मज़बूत होना ज़रूरी है,मिट्टी अगर उपजाऊ नहीं है तो उसे मेहनत से उपजाऊ बना लिया जाता है, और फिर उसमें ज़िन्दगी बाँटने वाले फूल खिलाए जाते हैं,ये एक ऐसा हुनर है जिसे वक़्त से आगे आगे चलने वाले लोग बाआसानी कर लेते हैं और साथ में चलने वालों को ख़बर भी होती है तो बड़ी देर बअद।

ऐसी ही एक ज़माना बदल शख़्सियत है अब्बाजान',हर ज़मीन को उपजाऊ बना लेना इनके बाऐं हाथ का खेल है,ज़मीन को उपजाऊ होते ही ये उसमें इतने रंग बिरंगे फूल खिला देते हैं कि देखने वालों की आँखें ख़ीरा हो जाती हैं,लोग सोचने लगते हैं कि आख़िर इसमें खाद पानी कैसा डाला गया है जो रंग बिरंगे फूल खिलने लगे, कारे बेमसरफ़ को कारे हुनर बना लेने में अब्बाजान बेहद ताज़ा दम और माहिर हैं, इसका नमूना उन्होनें गाहे बगाहे दिया भी है।

रोज़ फ़ितनों को जन्म देती है — उम्म ए बातिल है आपकी चौखट
जाने किस का स्क्रू ढीला मिले — हाथ में रखता हूँ हर दम पेचकस
बाख़ुदा इक सख़्त लानत है जहेज़ — कार देते हैं तो दें जापान की
पहले कुछ पिलपिलाइये इसको — बाद में मुँह लगाइये इसको
आज चेहरे से उठाता हूँ नक़ाब — मैं ही 'सालिम' मैं ही अब्बाजान' हूँ

बात मिट्टी की हो रही थी, मिट्टी दरअस्ल इन्सान के वजूद का एक ऐसा हिस्सा है जो अनासिरे ख़म्सा की बुनियाद है यअनी उसकी मात्रा ज़ियादा है, इन्सान में मिट्टी की ये मुमासिलत इन्सान को दूसरे हैवानों से अलग करती है, ज़राफ़त के ज़ौक़ की बुनियाद भी यही है,मिट्टी को जब अच्छे खाद पानी की सुहबत मिल जाती है तो उसकी उपजाऊ क़ुव्वत दोबाला हो जाती है, 'अब्बाजान' को ये सुहबत मिली एक 'ख़ार' के साए में, फूल की ज़िन्दगी के लिए ख़ार का होना भी ज़रूरी है फूल ख़ार के साए में ही अपनी नश्वो नुमा के मरहले तय करता है, 'ख़ार साहिब' कुहना मश्क़ शायिर हैं फीरोज़ाबाद में तकिया किए हुए हैं शमअए उर्दू को परवान चढ़ाने में अपनी ज़िन्दगी सर्फ़ कर रहे हैं अपने छोटे से हुजरे में बैठ कर इल्मो

ग़ज़ल

है तअस्सुब भरी किस दरजा चमन की ख़ुश्बू
इस से अच्छी तो हुआ करती है 'वन' की ख़ुश्बू
आप बेकार अगर बत्ती जलाते हैं 'वहाब'
सूँघ सकता नहीं हरगिज़ कोई 'सनकी' ख़ुश्बू
तुम महीनों से नहाए नहीं लगते हो 'अमीम'
कह रही है ये तुम्हारे ही बदन की ख़ुश्बू
शेअर कह कह के जो 'संजय' को सुनाए मैंने
भर गई उनके भी तन मन में जलन की ख़ुश्बू
आज के लौंडों को भाती है 'हुमा' 'कोलावरी'
क्या पता उनको 'जलोटा' के भजन की ख़ुश्बू
आप चाहें तो उसे गन्दा पसीना कह लें
जो है मज़दूर के माथे पे थकन की ख़ुश्बू
बदबूऐं लगती हैं माँ बाप में जिनको 'अब्बा'
क्या लुभाएगी उन्हें अपने वतन की ख़ुश्बू

क़तअह

साफ़ सुथरे मुआमलात नहीं
तेरे हालात तेरे साथ नहीं
लड़का पैदा हुआ है फिर चपटा
चायना का तो इस में हाथ नहीं

मुहतरमुल मक़ाम जनाब रईस उद्दीन 'रईस' साहब
की ज़मीन "वो उसकी इनायात का क़ाइल भी नहीं" पर

ग़ज़ल

घर में मिरे पत्थर नहीं,टाइल भी नहीं
इशरत के मिरे पास वसाइल भी नहीं
की नज़्र ग़ज़ल आपने मेरी भैय्ये
मैं शाह नहीं हूँ, कोई रॉइल भी नहीं
अब उम्र मिरी हो गई नव्वे से परे
ये दौर मिरा दौरे अवाइल भी नहीं
है आपसे किस दरजा मुहब्बत मुझको
ये बात बताने का मैं क़ाइल भी नहीं
ज़ख़्मी है मिरा जिस्म तो क्या ग़म मुझको
हाँ..हौसला अब तक मिरा घाइल भी नहीं
माँगूंगा मुहब्बत के सिवा कुछ भी न अब
हो ख़्वाहिशे ज़र ऐसा मैं साइल भी नहीं
दफ़्तर तो मुहब्बत का है क़ायम अब तक
पर रजिस में मिरे नाम की फ़ाइल भी नहीं
मफ़ऊल, मुफ़ाईल, मुफ़ाईल, फ़अल
इस बहर में मुश्किल कोई हाइल भी नहीं
अब किसको लगाएगा यहाँ मुँह 'अब्बा'
तुझ जैसा यहाँ अहले शुमाइल भी नहीं

ग़ज़ल

जानते बूझते तूफ़ान उठाया तुमने
फिर से सोता हुआ इक शेर जगाया तुमने
मैं तो तुम सबको हँसाता रहा हर आलम में
इसके बदले में फ़क़त मुझको रुलाया तुमने
मुझसे करते थे मुहब्बत तो जताते मुझको
क्या कभी मुझको कलेजे से लगाया तुमने
मैं तुम्हारे लिए तफ़रीह का सामाँ था महज़
मुझको इस बात का अहसास दिलाया तुमने
रूठ कर मैं तो निकल आया था अपने घर से
तुम बताओ..कभी इक बार मनाया तुमने
अपनी औलाद से बढ़कर तुम्हें चाहा मैंने
मेरा दिल सबसे ज़ियादा ही दुखाया तुमने
अपना हक़ याद रहा मेरी विरासत में मगर
एक बेटे का कभी फ़र्ज़ निभाया तुमने
वो तो यूँ कहिए, ग़ज़ल मैं ने लगा दी अपनी
'मिसरा ए तरह' था क्या ये न बताया तुमने
ऐरों, ग़ैरों का लिया करते थे तुम 'इन्टरव्यू'
अपने 'अब्बा' का तआरुफ़ भी कराया तुमने

ग़ज़ल

हैं सहूलत के इन्तिज़ाम ग़लत
ऐशो इशरत के ताम झाम ग़लत
हो न बीवी बराए नाम ग़लत
घर का हो जाएगा निज़ाम ग़लत
हो भी सकती है मौथरी तलवार
चुन न लेना कहीं नियाम ग़लत
बात मानोगे औरतों की अगर
होगा सबसे दुआ सलाम ग़लत
अब न सँभलेगी आप से घोड़ी
छोड़ दी आप ने लगाम ग़लत
ईंट का दो जवाब पत्थर से
लो ग़लत से हर इन्तिक़ाम ग़लत
है कहीं का अमीरे शहर बुरा
हैं किसी शहर के अवाम ग़लत
लोग चेले हैं कंस ओ रावण के
हो गए आज राम,श्याम ग़लत

क्यूँ न रंग ए लहू सफ़ेद पड़े
लोग खाने लगे तुआम ग़लत
अब पुलिस चौकियों के अन्दर ही
"हो रहे हैं तमाम काम ग़लत"
लोग 'जैरी' से कुछ नहीं कहते
सबको लगता है सिर्फ़ 'टॉम' ग़लत
रोज़ो शब एक से नहीं गुज़रे
सुब्ह अच्छी रही तो शाम ग़लत
तेरी हस्ती अभी अधूरी है
तूने 'सालिम' रखा है नाम ग़लत
लफ़्ज़ इक एक तौल लेता हूँ
होगा जुमला न इक ग्राम ग़लत
'अब्बा' उसको 'हलाल' कर डालो
जो समझता नहीं 'हराम' ग़लत

रुबाई

नेताओं के किरदार हैं देखे भाले
कपड़ों पे सफ़ेदी है मगर दिल काले
लगते हैं ये शैतान के 'अब्बा' मुझको
असमत के लुटेरे हैं, यही रखवाले

ग़ुस्सा

थूक दीजे जनाब अब ग़ुस्सा
वरना करने लगेंगे सब ग़ुस्सा
बन के नाज़िल न हो ग़ज़ब ग़ुस्सा
आपसे हो न जाए रब ग़ुस्सा
इल्म इस बात का किसी को नहीं
रब को आ जाए जाने कब ग़ुस्सा
ये सुना है सदा बुज़ुर्गों से
सिर्फ़ करते हैं बेअदब ग़ुस्सा
टूटता ही नहीं है मुद्दत से
ऐसा भी क्या है ये अजब ग़ुस्सा
प्यार हर शख़्स की ज़रूरत है
कोई करता नहीं तलब ग़ुस्सा
आप मुख़्लिस हैं संगदिल तो नहीं
पेशे लब प्यार ज़ेरे लब ग़ुस्सा
माँग लीं हैं मुआफ़ियाँ सब ने
किस लिए हैं जनाब अब ग़ुस्सा

ग़ुस्सा सिहहत ख़राब करता है
है बदन के लिए लहब ग़ुस्सा
आप बीमार पड़ न जाऐं कहीं
ले न जाऐ कहीं मतब ग़ुस्सा
ग़ुस्सा इस्लाम ने हराम किया
सोचिऐ है हलाल कब ग़ुस्सा
आपको सब मना रहे हैं अभी
होगा क्या कल जो होंगे सब ग़ुस्सा
डर अगर है तो सिर्फ़ है इतना
हो न जाए कहीं कलब 'ग़ुस्सा
रात दिन चिड़चिड़ाती हैं अम्मी
'अब्बा' करते हैं रोज़ ओ शब ग़ुस्सा

रुबाई

ग़ुस्से में ये सन्दूक़ ए अदब खोल लिया
अहबाब की नफ़रत के सबब खोल लिया
दो चार से बिगड़ी जो हमारी 'अब्बा'
हम ने भी नया अपना कलब खोल लिया

ग़ज़ल

शेर को लगती है जैसे कि 'हिरन' की ख़ुश्बू
सूँघ लेता हूँ कुछ ऐसे ही मैं 'ज़न' की ख़ुश्बू
गोश्तख़ोरी के सबब पड़ गई आदत ये बुरी
'दाल सब्ज़ी' में भी लगती है 'मटन' की ख़ुश्बू
वस्ल से पहले ज़रा देख तो लेती चेहरा
तुझ को महसूस न हो पाई 'सजन' की ख़ुश्बू
ज़र्फ़ क्या चीज़ है कर लेतीं हैं तन का सौदा
जिन ख़्वातीन को लग जाती है 'धन' की ख़ुश्बू
सिर्फ़ इक बार ही उतरा था गगन धरती पर
आज तक आती है धरती से गगन की ख़ुश्बू
लाख परदों में रखो डाल दो ताले लेकिन
ढूँड ही लेती है दुल्हा को दुल्हन की ख़ुश्बू
तूने रोते हुए लोगों को हँसाया 'अब्बा'
इस लिए फैल गई तेरे सुख़न की ख़ुश्बू

क़तअह

ज़माने की रविश से डर रहा है
दुआ मरने की हर दम कर रहा है
मुझे हालात वहशी कर रहे हैं
मिरे अन्दर का इन्साँ मर रहा है

ग़ज़ल

बे सबब भागती है खूँटे से
क्या तिरी दुश्मनी है खूँटे से
तू अनोखी नहीं बँधी है यहाँ
भैंस इक इक बँधी है खूँटे से
हर तरह से यहाँ है तू महफ़ूज़
तेरी इज़्ज़त बची है खूँटे से
खुल गई गर तो काट देंगे लोग
सोच ले ज़िन्दगी है खूँटे से
उसको आवारा लोग कहते हैं
भैंस जो खुल गई है खूँटे से
काट सकती नहीं तू ज़ंजीरें
सींग क्यूँ घिस रही है खूँटे से
सब वफ़ा दारियाँ हैं मालिक से
सारी फ़रमा रवी है खूँटे से
हैं मुक़द्दर में रस्सियाँ 'अब्बा'
तेरी क़िस्मत बँधी है खूँटे से

ग़ज़ल

है रंजो ग़म का कोई तो कोई ख़ुशी का वरक़
पलट के देख ज़रा मेरी ज़िन्दगी का वरक़
कुछ एक रोज़ में आ जाएगी किताब मिरी
हर इक वरक़ पे गुमाँ होगा है किसी का वरक़
खुलेगा पहले ही सफ़हे पे राज़ 'अब्बा' का
उलट के देखोगे जिस वक़्त चौपड़ी का वरक़
कोई भी बेटा मदद के लिए नहीं आया
वगरना जिल्द पे चढ़वाता चाँदनी का वरक़
जियाला ख़ुद को लिखा ख़ुद नविश्त में अपनी
कोई रखा ही नहीं मैंने बुज़दिली का वरक़
इसी लिए तो मैं छपवा रहा हूँ मजमूआ
किसी के हाथ न लग जाए शायिरी का वरक़
अगर किताब कबाड़ी के हत्थे चढ़ जाए
जला ही देगा अँगीठी में वो सदी का वरक़
मैं 'संजय शौक़' की अफ़सुरदगी समझता हूँ
किसी ने फाड़ लिया उनकी डायरी का वरक़
अब 'अब्बाजान' की बकरी भी शेअर कहती है
चबा गई है ये कमबख़्त शायिरी का वरक़

फ़न के चराग़ से चराग़ रौशन कर रहे हैं उनमें से बर्रे सग़ीर को अपनी तख़लीक़ात की रौशनी के ज़रिए मुतास्सिर करने वाला एक चराग़ 'सालिम शुजा उर्फ़ 'अब्बाजान' हैं।

'अब्बाजान' दरमियाने क़द के गोल मटोल 40–45 साल के पेटे के, गुस्से और ज़राफ़त को मिलाजुला कर कारख़ाना ए ख़ुदा में तैय्यार कर्दा एक आदमी हैं जो पान नहीं कान ज़ियादा खाते हैं मुसतक़िल संजीदा रहना जिनके बस की बात नहीं है,हँसने की कोई न कोई वजह वो पैदा ज़रूर कर लेते हैं दाना डालकर दूसरे का मुँह देखते हैं गोया दाना न उठा पाया तो उसकी ख़ैर नहीं उसको तो पता भी नहीं चलता कि बेचारा कब 'अब्बा'की ज़द में आ गया और संजीदा तफ़रीह का मोज़ूअ बन गया, हाँ जिसने डण्डा उठा लिया वो 'अब्बा'का चहेता बन गया 'अब्बा' उस पर जान छिड़कने को तैय्यार हो जाते हैं।

मेरी मुलाक़ात 'अब्बाजान' से चन्द महीनों की है जनाब को मैं शुरूअ में नहीं पढ़ता था लेकिन 'अब्बा'अपनी हरकत से बाज़ नहीं आए और मेरा नाम लेकर लिखना शुरूअ कर दिया तो देखना ही पड़ा, आख़िर कब तक नज़र अन्दाज़ करता.....मैं क्या कोई भी नहीं कर सकता था, इनके कलाम पर नज़र डालते ही इनकी कुहना मश्क़ी के बारे में बिना बताए ही पता चल गया,मौसूफ़ ज़िहाफ़ात का ऐसा चालाकी से इस्तअमाल करते हैं कि देखने वाला अश अश करता रह जाए।

भला हो फ़ेसबुक का जिसने 'अब्बाजान' के वजूद को जिला बख़्शी, वरना हम एक बड़े फ़नकार से काफ़ी दिनों तक वंचित रह जाते और हमको बक़ौल बशीर फ़ारूक़ी ये कहना पड़ता कि ....कुछ ऐसे फूल हैं जिनको मिला नहीं माहौल–महक रहे हैं मगर जंगलों में रहते हैं....'अब्बाजान' का हुनर उनको ख़ुद ढूँडता है और ऐब भी उनकी शायिरी में हुनर बन जाता है, तन्ज़ो मज़ाह की शायिर का ऐब ये है कि मज़ाह करते करते संजीदा हो जाए 'अब्बाजान' के यहाँ भी ये ऐब बहुत है मगर यही ऐब 'अब्बा' का हुनर बन जाता है और उन की तख़लीक़ का जुज़ भी,जो दूसरों से 'अब्बा' को अलग भी बनाता है और मुहतरम भी,

'अब्बाजान' का असली नाम 'सालिम शुजा अन्सारी' है..... जो एक संजीदा और ज़बरदस्त फ़नकार हैं,उनके अन्दर एक शरारती बच्चा हमेशा से था जो वक़्त के साथ बड़ा हो गया और 'अब्बाजान' बन गया, दरअस्ल ज़राफ़त के साथ संजीदगी का जो मिलान है वो इसी 'सालिम शुजा अन्सारी' की देन है।

'सालिम शुजा अन्सारी' फ़ितरी शायिर हैं,क़ुदरत ने शायिर बनाकर भेजा है उन्हें, उनकी बातचीत, उनका तर्ज़ तकल्लुम, तर्ज़ तहरीर, सबसे अलग है....यहाँ मैंने मुनफ़रिद नहीं कहा क्यूँकि ये लफ़्ज़ इतने आवारा हाथों में पहुँच कर बदनाम हुआ कि अपनी हुरमत ही खो चुका है,'सालिम शुजा अन्सारी' का कलाम उर्दू के मुख़तलिफ़ रसाइल में काफ़ी वक़्तों से छप रहा है एक पहचान बनी हुई है ,मिनारे ताह पर हाथ के हाथ शेअर कह कर टाँक देने के फ़न में भी'सालिम शुजा अन्सारी' माहिर हैं, फ़िलबदीह शेअर कहने में इनका कोई

ग़ज़ल

मैं जीना चाहता हूँ यार जो मरता है मरने दें
मुझे इस बज़्म में लेकिन कुलाँचें कुछ तो भरने दें
मुझे तो आप ने हउआ बनाकर पेश कर डाला
तो इस हउऐ से बच्चों को कई दिन और डरने दें
मैं हरगिज़ आपकी पाबन्दियों में जी नहीं सकता
जो करना चाहता हूँ मैं, मुझे बेख़ौफ़ करने दें
हुआ है सामना अब के बुढ़ापे से जवानी का
मुझे तैय्यारियों के साथ मैदाँ में उतरने दें
ये मैं भी जानता हूँ कल इन्हीं हज़रात का होगा
अभी इन बाल बच्चों को ज़रा सजने संवरने दें
सिमट जाऐंगे गर ये ख़ुद में तो मुरझा ही जाऐंगे
ये गुल गुन्चे हैं गुलशन में इन्हें खिलने बिखरने दें
हमारी ज़िम्मेदारी है हक़ीक़त को बयाँ करना
भला हम किस तरह इस बज़्म में शेख़ी बघरने दें
कोई बुलबुल नहीं' अब्बा 'कि जिसके पर कतर जाऐं
कतर सकते हैं करगस के, तो इनको पर कतरने दें

facebook ke

ABBAJAAN

सालिम शुजाअ अन्सारी

सालिम शुजाअ अन्सारी
एक ऐसा नाम है जो हमाँ वक़्त
मेरे दिल की धड़कनों के साथ धड़कता है

-एम.ए. ख़ार

बोधि
₹ 100.00
बोधि जन संस्करण
आवरण संयोजन : तरु टीम

सानी नहीं,कई बार मेरी और इनकी बैतबाज़ी हो चुकी है, अदबी सरगरमियों में मसरूफ़ रहने वाले सालिम उर्फ़ 'अब्बाजान' दिन भर की तकान को उतार फैंकने के लिए कुछ न कुछ कहते ज़रूर हैं और ज़राफ़त के इसी अन्दाज़ से ज़माने के साथ साथ अपना भी मनोरंजन करते हैं ओर उन Subjects को मोज़ूअ बनाते हैं जो समाज के सम्तो रफ़्तार तय करने में अपना अहम Role अदा करते हैं, 'अब्बाजान' की शायिरी में ज़िन्दगी के वो सभी रंग नुमायाँ हैं जो इक आम इन्सान के सुख दुख में हमें दिखाई पड़ते हैं।

'अब्बाजान' अब्बा तो अपने तीन बेटों के हैं और जान हम सबकी हैं, मिज़ाज की तुर्शी हमाँ वक़्त रहती है उन पर...जिसका शिकार सामने वाला कब हो जाए कुछ कहा नहीं जा सकता.....पारा जिस तेज़ी से चढ़ता है उस से ज़ियादा तेज़ी से उतर भी जाता है पारा चढ़ते ही सामने वाले की ख़ैर नहीं, गुस्से में भी मौसूफ़ अश्आर के ढेर लगा देते हैं.... और ख़ुश हो जाऐं तो दिल, जिगर, कल्ला, कलेजी, गुर्दा, फेफड़े सब लुटाने को तैय्यार रहते हैं 'अब्बाजान' यारों के यार हैं जिसको अपना मान लिया उस पर सब कुछ निसार अपनी तख़्लीक़ी इमारत को इस्तिआरात के कुमकुमों से सजा कर ऐसा अनोखा ईंट गारा लगाते हैं कि इनके कलाम को सुननेऔर पढ़ने वाला ख़ुद को ढूँड ही लेता है।

पत्थर मिज़ाज नज़र आने वाले 'अब्बाजान' काँच की चूड़ियों के मुवाफ़िक़ गोल मटोल और नाज़ुक मिज़ाज हैं ज़रा सी ठेस भी बरदाश्त नहीं कर पाते हैं हाँ एक फ़र्क़ है काँच ठेस से बिखर जाता है और अब्बा बिफर जाते हैं, पथरीले शहर में उर्दू के तहज़ीबी सरमाए को सँभाले रख पाना भी एक अहम काम है, अपनी मर्ज़ी के मालिक 'अब्बाजान' किसी से मुतास्सिर नहीं होते ...हों भी कैसे उन जैसा दूसरा दूर दूर तक नज़र भी नहीं आता, तन्ज़ के साथ मज़ाह और संजीदगी का तालमेल 'अब्बाजान' के सिवा किस के बस का है? अल्फ़ाज़ की चाबुकदस्ती, रिआयते लफ़्ज़ी, शौकते अल्फ़ाज़ी,फ़ने अरूज़ का इल्तिज़ाम,बहरों का इन्तिख़ाब, मिसरों की सलासत,मअयार का लिहाज़, 'अब्बाजान' की शायिरी का हुस्न है दरअस्ल 'अब्बा' के अन्दर सालिम' है और 'सालिम' के अन्दर 'अब्बा'.....लिहाज़ा जब 'अब्बा' पर सालिम ग़ालिब आ जाते हैं तो 'अब्बा' तन्ज़ो मज़ाह करते करते यकायक संजीदा हो जाते हैं और क़ारी हैरत में पड़ जाता है मगर वो जल्द ही फिर 'सालिम' पर उबूर हासिल कर लेते हैं और 'अब्बा' बन जाते हैं।

कोई भी सिन्फ़ हो रुबाई,ग़ज़ल,दोहा, या नज़्म, 'अब्बाजान' फ़िलबदीह 20–25 शेअर ठोंक ही देते हैं ,मश्क़े सुख़न और क़ादिरुल कलामी 'अब्बाजान' के भी ज़ेवर हैं और 'सालिम शुजा अन्सारी' के भी,यही एक नुक्ता 'अब्बा और सालिम' को बराबरी पर ले आता है.....बाक़ी जगह 'अब्बाजान' आगे हैं और सालिम शुजा अन्सारी' पीछे....

"संजय मिश्रा शौक़"

"अब्दुल वहाब सुख़न"
(लेकचरर) "अलज्योफ़ यूनीवर्सिटी"
सकाका–सऊदी अरब

फ़ेसबुक के अब्बाजान.... (एक ख़ाका)

फ़ेसबुक के "अब्बाजान" से मेरी पहली मुलाक़ात "बज़्मे सुख़न" में हुई। "बज़्मे सुख़न"फ़ेसबुक पर शायरी का ऐसा ग्रुप है जो शेअरो अदब के हवाले से अपनी एक शिनाख़्त रखता है, इत्तिफ़ाक़ से इस ग्रुप की सरपरस्ती करने का जिम्मा मेरा ही है बात तक़रीबन 2 साल पहले की है, मैं हस्बे मअमूल ग्रुप की कारवाई देख रहा था कि अचा–नक ग्रुप में शामिल होने के लिए एक Request आई, जिसके भेजने वाले का नाम "अब्बाजान" था, नाम देखकर ही मेरी दिलचस्पी बढ़ गई,लिहाज़ा मैं प्रोफ़ाइल में गया और "अब्बाजान" के कवाइफ़ की जानकारी लेना चाही मगर मेरी हैरत की इन्तिहा न रही जब मैंने अपनी नौइयत का अनोखा तआरुफ़ पढ़ा जिसमें मसरूफ़ियत के कालम में दर्ज था ..*कहीं नही*..मज़ीद दर्सगाह के बारे में बड़ी बेबाकी से लिखा था...*वो कालेज अब टूट गया*....तआरूफ़ से एक बात तो अयाँ तौर पर ज़ाहिर थी कि "अब्बजान"ज़बरदस्त Sense of humour के मालिक हैं।

तिलिस्माती शख़्सियत वाले "अब्बाजान" की तस्वीर को मैंने ख़ूसूसन ग़ौर से देखा तस्वीर में उनके झबरे और ग़ैर मुनज़्ज़म बालों को देखकर लगा कि उन्हें आइना देखने और बालों में कंघी करने का शौक़ कभी नहीं रहा,माथे से ज़रा ऊपर सर का कुछ हिस्सा उम्रे तबई के साथ बालों से आरी था,मेज़ पर झुका हुआ...क़लम और क़िरतास से नबुर्द आज़मा ये बूढ़ा शख़्स तख़लीक़ के किसी मरहले से गुज़रता नज़र आया। यानी "अब्बा जान" का मुकम्मल हियूला ही उनके अज़ीम शायर,अदीब या मुसव्विर होने पर दलालत कर रहा था,"अब्बाजान" ने जो मअलूमात अपने प्रोफ़ाइल पर अपने कवाइफ़ के हवाले से दी है उसके मुताबिक़ वो अपनी ज़िन्दगी के 93 बसंत पार कर चुके हैं।

"अब्बाजान" आज भी फ़ेसबुक पर फ़आल नज़र आते हैं,"अब्बाजान" ने अपनी शायरी को मक़बूले आम करने के लिए बज़्मे सुख़न के अलावा भी दीगर कई ग्रुप्स में अपने पाँव पसार लिए,फ़ेसबुक पर एक बहुत मशहूर ग्रुप "शायर कलब" जहाँ शोअरा की तादाद निस्बतन ज़्यादा है और जिसके एडमिन मेरे दोस्त जनाब "हादी जावेद" हैं वहाँ "अब्बाजान" ने मुतवातिर अपना कलाम पेश किया और सबसे अपने फ़न का लोहा मनवाकर "उस्तादे फ़न" की हैसियत हासिल कर ली, इसी असना में हादी उनके महबूब बेटों में शामिल हो गए और "अब्बा" की महरबानियाँ शायर कलब का मुक़द्दर बन गईं।

अब ये आलम है कि फेसबुक पर ज़्यादा तर ग्रुप्स में जो शेअरो सुख़न से वाब –स्ता हैं "अब्बाजान" बेहद मक़बूल हैं "ढाई अक्षर प्रेम के" शायिरी का नुमाइन्दा ग्रुप है जिसके एडमिन अज़ीज़म 'अमीम जाफ़री' हैं उनपर शुरूआत में "अब्बाजान" की बहुत महरबानियाँ रहींऔर "अब्बाजान" वहाँ भी अपना कलाम पाबन्दी से पोस्ट करते रहे। बअद में"अब्बाजान" ने 'अमीम जाफ़री' को किसी बात पर टिन' खाकर एक नाफ़रमान बेटे की सनद दे डाली, लेकिन उनसे शफ़क़त का तअल्लुक हमेशा ही रखते हैं।

मुआसिराना रक़ाबत जोकि शायिर अदीबों की ख़ास और नाक़ाबिले इलाज बीमारी है,"अब्बा" भी उस से बच नहीं सके,"अब्बा" को अच्छे अश्आर कहने वालों से हसद रहता है और वो तंज़ को अश्आर के क़ालिब में ढालकर हर उस शायिर को निशाना बनाते हैं जो अच्छा कलाम कहता हो या फ़न पर दस्तरस रखता हो, डा. आदिक भारती जी से"अब्बाजान" की नोक झोंक फ़ेसबुक पर किसी से ढकी छुपी नहीं है, 'आदिक जी' के बालों का जो सत्यानाश "अब्बा" ने किया है वो कोई अनाड़ी बारबर भी नहीं कर सकता 'आदिक जी' के नाम एक जवाबी नज़्म में "अब्बाजान" सुख़न तराज़ हैं।

आपकी नज़रे पड़ीं बस मेरे झबरे बालों पर
क्या कभी डाली हैं नज़रे अपने पिचके गालों पर
चेहरा ए अनवर कभी तो आइने में देखते
हद्दे पेशानी कहाँ तक है ज़रा तो सोचते
उड़ गए गेसू या फिर बेगम से खटपट हो गई
कुछ तो कहिए खोपड़ी कैसे सफ़ाचट हो गई
आप ख़ुद को क्या समझते हैं रितिक रोशन हैं आप
आधे अनुपम खेर तो आधे अमित बच्चन हैं आप

किसी भी शख़्स का लफ़्ज़ी ख़ाका खींचने में "अब्बाजान" को मलका हासिल है जो अच्छे अच्छे शायिरों को नसीब नहीं,दरअस्ल उनके कलाम की पज़ीराई की शुरूआत फेसबुक पर 'बज़्मे सुख़न' से हुई,वहीं उन्होने 'बज़्मे सुख़न' के बेटे और बेटियों के लिए एक शाहकार नज़्म भी तख़लीक़ की जिसका उन्वान था "अब्बाजान की वसीयत", इस नज़्म के बअद "अब्बाजान" की शौहरत दिन दुगनी बढ़ती गई साथ ही उनके परिस्तार बेटे और बेटियों में भी इज़ाफ़ा होता गया, मुकम्मल वसीयत तो आप किताब में मुलाहिज़ा फरमाऐंगे यहाँ सिर्फ़ चन्द अश्आर पेश कर रहा हूँ जो शायिर की फ़न्नी रिफ़अत व लफ़्ज़ी चाबुक दस्ती का जीता जागता सुबूत हैं।

वक़्त की अब यही नज़ाकत है — बाख़ुदा ख़ुदशा ए हलाकत है
मेरे बच्चो मिरी नसीहत है — पेश तुमको मिरी वसीयत है
फ़र्ज़ अपना 'वहाब' अदा करना — कर्ज़ मेरा शिताब अदा करना

दें किराया मकान का 'हादी' मेरी दौलत जो खा गए आधी
दाँत का सैट 'जाफ़री' के लिए एक कंघा है 'भारती' के लिए
हक़ है मसऊद का रिसालों पर और 'मीनू' का हक़ किताबों पर
और भी रह गए हैं कुछ बच्चे मिल न पाए थे जिनके डी एन ए
जब वो पूछेंगे तब बुरा होगा चील के घोंसले में क्या होगा

"अब्बाजान" जब पहली बार फ़ेसबुक पर आए तो लगा कि दूसरी फ़र्ज़ी नामों वाली आई.डी की तरह इस आई.डी. में भी कोई दम दरूद नहीं होगा लेकिन इसके बर अक्स ही हुआ मअयारी और तंज़िया शायिरी सामने आने लगी इस शायिरी को पढ़कर इक अजीब से तजस्सुस ने दिल में राह बना ली और दिमाग़ ये सोचने पर मजबूर होगया कि ऐसी मअयारी शायिरी और वो भी तंज़ ओ ज़राफ़त के तमाम लवाज़मात के साथ कौन कर सकता है और ये मख़सूस मगर दिलचस्प कलाम कौन लिख सकता है।

फ़ेसबुक पर वारिद होने के बअद "अब्बा" की नज़्में मुतवातिर आती रही हैं जिन्हें मैं ग़ौर से पढ़ा करता था, मैं कलाम का तजज़िया ख़ुफ़िया तौर पर कर रहा था और बहुत जल्द ही मैंनें अन्दाज़ा लगा लिया कि ये हज़रत कौन हैं, एक दिन ज़हन में शक का कीड़ा कुलबुलाया और न सिर्फ़ शक बल्कि लहजा और अल्फ़ाज़ के बरतने के अन्दाज़ से मैंनें अन्दाज़ा लगा लिया कि ये मेरे एक बहुत क़रीबी दोस्त जनाब "सालिम शुजा अन्सारी" हैं मैंनें उन्हें इस मुतअल्लिक़ मैसेज किया तो उन्होंने जवाब दिया कि "सुख़न" साहब आपका ख़त ग़लत पते पर आ गया,लेकिन मुझे मअलूम था कि मेरा पैग़ाम सही जगह पर पहुँचा था यानि तीर निशाने पर जा लगा था मेरी कुछ और मूशिगाफ़ियों के बअद 'सालिम' साहब ने आख़िर तस्लीम कर ही लिया कि वो ही "फ़ेसबुक के अब्बाजान" हैं।

गोया कि मैं पहला शख़्स था कि जिसने सबसे पहले ये निशानदही की कि"फ़ेसबुक के अब्बाजान" के परदा ए ज़न्गारी में कौन है किसी दूसरे की आई.डी. से किसी किरदार के पैकर में ढलना एक मुश्किल तरीन अम्र है जिसे"सालिम " साहब ने मुमकिन कर दिखाया ये बिल्कुल ऐसा ही है जैसे अदाकार किसी फ़िल्म का किरदार निभाते वक़्त उस किरदार के हियूले में ढलने की कोशिश करते हैं और उस किरदार की रगो पै में उतर कर किरदार को ज़िन्दा ओ जावेद कर देते हैं "अब्बाजान" भी ऐसा ही एक किरदार है जिसमें ढल कर "सालिम शुजा " साहब ने उसे फ़ेसबुक के पर्दे पर दवाम बख़्शा,"अब्बाजान"की जो इमेज आम तौर से उभर कर आई वो एक ऐसे फ़नकार की इमेज है जो ख़ुद्दारी की हद तक चिड़चिड़ा व बेबाक नज़र आया,ज़रा ज़रा सी बात पर रूठना, उम्र रसीदा लोगों की तरह ज़िद करना और अपनी ख़ुशामदें कराना इनका ख़ास नेचर रहा,कलाम के एतबार से क़ादिरुल कलाम, निहायत मतीन व संजीदा और ज़राफ़त के एतबार से दो आतिशा ये शख़्स अपने पूरे तमतराक़ के साथ फ़ेसबुक पर अपने क़लम की हुक्मरानी व बादशाहत क़ायम रखने में कामयाब रहा।

THIS EBOOK IS DOWNLOADED FROM
SHAAHISHAYARI.COM

LARGEST COLLECTION OF URDU
SHERS, GHAZALS, NAZMS AND EBOOKS.

सालिम शुजाअ अन्सारी

तअलीम : **एम.ए., यू.टी.टी., आई.जी.डी.बाम्बे**

मुआश : **हैड मास्टर** (बेसिक शिक्षा परिषद,उ.प्र.)

अवार्ड : **"आबरू ए सुख़न"**–2006 (बज़्मे फ़रोग़े अदब)
"शहज़ादा ए फ़न"–2008 (बज़्मेअसीर,अलीगढ़)
"आफ़ताब ए सुख़न"–2010 (आज़र एकेडमी,अलीगढ़)
"ख़ामा ए अन्सार"– 2011 (बी.एस.ए.एजुकेशनल सोसाइटी)

तसानीफ़ : **इरतिआश** (मजमूआ ए कलाम 2004) उर्दू
एतराज़ (मजमूआ ए कलाम 2008) उर्दू/हिन्दी
हिन्दुस्तान व बैरूनी मुमालिक के अदबी रसायल व अख़्बारात में कलाम की मुसलसल इशाअतें

मशाग़िल : **मुसव्विरी, किताबत, कम्प्यूटर ग्राफ़िंग, डिज़ायनिंग**
शायिरी, व अदबी सरगरमियाँ
प्रदेश सचिव, उर्दू टीचर्स एसोसियेशन उ.प्र.

डायरेक्टर : **शुजा कम्प्यूटर वर्ल्ड, फ़िरोज़ाबाद**

पता (निवास) : **12,मुहल्ला बग़िया, फ़िरोज़ाबाद–283203 यू.पी.**
ई मेल : saalimshuja@gmail.com
ब्लॉग : **awazein khamoshi ki** (http://saalimshujaansari.blogspot.in)
फ़ेसबुक पर : http://www.facebook.com/SaalimShujaAnsari?ref=ts&fref=ts
मोबाइल : Cell. 098 37 659083

"सालिम शुजा अन्सारी" साहब के फ़न और शख़्सियत के बारे में कुछ कहने के लिए पूरी एक किताब भी नाकाफ़ी है लेकिन यहाँ पर उनकी शख़्सियत के अनोखे और अछूते पहलू पर गुफ़्तगू कर पाया हूँ जो उनके "अब्बाजान" के रौल में तंज़ ओ ज़राफ़त की शायिरी के हवाले से है, कलाम पर क़ुदरत हर इन्सान का हिस्सा नहीं होती लेकिन 'सालिम' को अल्लाह तआला ने क़लम का धनी बनाया है,जूद गोई और कलाम की संजीदगी उनका वस्फ़े ख़ास है,"अब्बा" के रौल में उन्होने जो तंज़ो ज़राफ़त के फूल बिखराए हैं वो न सिर्फ़ क़ाबिले सद सताइश हैं बल्कि हैरत अंगेज़ भी हैं।"अब्बाजान" के फ़र्ज़ी नाम से जो शायिरी उन्होने की है उसमें मुझे फ़रामोश नहीं किया बल्कि नुमायाँ तौर पर अपनी तंज़िया शायिरी की धार पर रखा,मेरे सऊदी अरब से वतन वापसी पर एक नज़्म कही जो ख़ुद में तंज़िया शायिरी का बहतरीन शाहकार है, इस नज़्म के चन्द अश्आर से ही "सालिम" साहब उर्फ़ "अब्बा"की क़ादिरूल कलामी और पुख़्ताकारी का अन्दाज़ा बदरजा ए अतम हो जाता है।

तुहफ़ा अगर नहीं है तो ख़ाली अदब से क्या
बेटा 'वहाब' लाऐ सऊदी अरब से क्या
इक इल्तिजा यही थी कि सुरमा तो लाओगे
हम को मताअे नादिर ओ रख़्त ए अजब से क्या
आते ही हिन्द पहले बरेली को जा लगे
लगता नहीं है डर मिरे ग़ैज़ ओ ग़ज़ब से क्या
फ़ोटो में भी खड़े हो तो इक 'आदमी' के साथ
तुमको किसी हसीन के रुख़्सार ओ लब से क्या

मैं इस किताब की इशाअत के मौक़े पर अपनी तमाम तर नेक ख़्वाहिशात पेश करता हूँ,मुझे " सालिम शुजा " साहब की दोस्ती पर फ़ख़्र है,इनकी शायिरी पर फ़ख़्र है, ऐसी नाबग़ए हस्तियाँ अदब की उस क़न्दील को रौशन रखे हुए हैं जो हमारे बुज़ुर्गों ने रौशन की थी,और आने वाली नस्लें उनके कलाम से न सिर्फ़ इस्तिफ़ादा करेंगी बल्कि उनका नाम भी अदब की तअमीर के हवाले से रौशन रखेंगी।

अब्दुल वहाब "सुख़न"

"डा. मुहम्मद आज़म"
''सुकून'',आई/193, पंचवटी कॉलोनी,
एअर पोर्ट रोड, भोपाल–32

अब्बाजान....(दोहरा किरदार)

ये उर्दू शेअरो सुख़न में हमेशा मायूस करने वाली बात रहेगी कि ज़राफ़त व तंज़ो मज़ाह से भरी शायिरी को उस संजीदगी से देखा पढ़ा नहीं जाता जिसकी वो मुतक़ाज़ी होती हैऔर ऐसी शायिरी का मक़ाम तअय्युन करने में लोग क़तई दिलचस्पी नहीं लेते और दोयम दर्जे की शायिरी का लेबिल लगाकर बअज़ दफ़अ तो अदबी काम ही क़रार नहीं देते,इस लिए अक्सर फ़ितरी ज़राफ़त रखने वाला शायिर भी मजबूर होकर संजीदा शायिरी करता है कि उस से कुछ वक़अत हासिल होगी,कई बार संजीदा शायिर का भी तंज़ो मज़ाह की शायिरी करने का दिल करता है मगर हौसला नहीं होता कि लोग उसे ग़ैर संजीदा साबित न कर दें और उसे हल्केपन का शिकार न बता दिया जाए।

मगर मेरा ख़्याल क़तई बरअक्स है,संजीदा शायिरी की अपनी वक़अत है मगर इतनी वुस्अत नहीं जितनी ज़राफ़त से पुर शायिरी की,मुमकिन है आप मुझसे मुत्तफ़िक़ न हों मगर जब आप हर दूसरे इन नाम निहाद संजीदा शायिरों को वही घिसे पिटे, पामाल मज़मून को बार बार दुहराते देखेंगे तो यक़ीन कर लेंगे.....ज़राफ़त,तंज़ो मज़ाह,हज़्ल वग़ैरा की हदें लामहदूद हैं, और शायिर अपना इन्फ़िरादी मक़ाम बना सकता है अगर उसमें वाक़ई फ़ितरी सलाहियत है तो.....कौन भूल सकता है 'साग़र ख़य्यामी' को,'दिलावर फ़िगार' को.....उनकी फ़िक्री वुस्अत,शौहरत,वक़अत,किसी भी संजीदा शायिर से किसी भी तरह कम नहीं थी, ज़रूरत है तो बात से बात निकालने के हुनर की,ज़बान ओ बयान पर क़ुदरत और फ़न ए शायिरी पर दस्तरस की।

ऐसा ही एक फ़नकार है ''अब्बाजान''। दरअस्ल ''अब्बाजान'' ने अपनी तंज़िया और मज़ाहिया शायिरी में फ़न्नी लवाज़मात का ख़ास ध्यान रखा है,वो फ़ारसी,उर्दू,हिन्दी, और कई दफ़अ अंग्रेज़ी अल्फ़ाज़ को इस क़रीने से इस्तेमाल करते हैं कि न सिर्फ़ शेअर तकमील को पहुँच जाता है बल्कि तरसील मे भी कामयाब रहता है,इस तरह की शायिरी में अक्सर शायिर हल्के मज़ामीन तो कभी घटिया क़िस्म की बातें ,चुटकुले बाज़ी, और पेराडी में अपने जौहर दिखाकर मज़ाह पैदा करने के बजाए उस शायिरी को रुस्वा कर देता है,मगर ''अब्बाजान'' की बात दीगर है,उनके मज़ाह में भी संजीदा नुक्ता आफ़रीनी मिलती है जिसकी वजह से उनकी शायिरी उमूमी और ग़ैर मआयारी न रह कर ख़ुसूसी हो जातीहै,बअज़ दफ़अ वो भी क़ाफ़ियों के लालच में हल्केपन का शिकार हो जाते हैं और तवील ग़ज़ल के दाम में उलझ कर भरती के

अश्आर तक कह जाते हैं फिर भी ज़ियादा तर अश्आर में निहायत लतीफ़ ज़राफ़त पाई जाती है और बज़ाहिर मज़ाहिया शेअरों की ज़ेरीं सतह में तंज़ कार फ़रमा होती है।

''अब्बाजान'' फ़क़त हँसाते नहीं बल्कि वो हँसाते हँसाते हमें रंजीदा और संजीदा भी कर देते हैं उनका मुतालआ,मुशाहिदा,मुआइना, तजरुबा,तजज़िया,नज़रिया सब उनके इन्फ़िरादी है मगर उनमें इजतिमाई बन जाने की पूरी सलाहियत होती हैऔर महसूस होता है कि क़ारी की फ़िक्र को शेअरों में ढाल रहे हैं,वो समाज और दुनिया पर हँसते नहीं बल्कि अक्सर ओ बेश्तर अपने आप पर भी तज़हीक का निशाना साध देते हैं,ख़ुद पर हँसना बड़े दिल गुर्दे का काम है और ''अब्बाजान'' के दिल गुर्दे में ये ताक़त है।

''अब्बाजान''अपनी शाइस्ता और शगुफ़्ता ज़बान ओ बयान से ऐसी ज़राफ़त पैदा करते हैं कि न सिर्फ़ आम ज़हनों को भाते हैं बल्कि अदबी हलक़ों में भी अपना तास्सुर छोड़ जाते हैं उनकी ज़ाफ़रानकारी से हरकस ओ नाकस,हर आम ओ ख़ास को महज़ूज़ होते देखा गया है यही उनकी कामयाबी है ,कई बार उम्र पुख़्ता हो जाती है तब भी शायिरी पुख़्ता नहीं हो पाती।

मगर'अब्बाजान''इतनी कम उम्र में इतनी अच्छी शायिरी कर रहे हैं ये हैरत की बात है, यहाँ आप भी हैरत करेंगे कि मैंने ''अब्बाजान'' को कमउम्र कहा.....जी हाँ वो कम उम्र ही हैं... बज़ाहिर वो अपने तस्वीरी अक्स की वजह से क़दीमी शख़्स लगते हैं और ये लगता है कि अब्बा तो वो बहुत पहले बन चुके होंगे अब तो वो दादा परदादा हो चुके होंगे,मगर इस कम उम्र अब्बा को मैं अच्छी तरह जानता हूँ,वो ''अब्बाजान'' तो हैं मगर छोटे छोटे बच्चों के, दरअस्ल ये एक क़लमी नाम है फ़र्ज़ी शिनाख़्त है,ये शख़्स नहीं बल्कि एक किरदार है जिसे बड़ी ख़ूबी से निभा रहा है एक शख़्स जो अभी जवाँ साल है....जो पुख़्ता तो है मगर उम्र में नहीं बल्कि फ़न्ने शायिरी में ...इसी लिए किसी को ज़रा भी शक नहीं हुआ....लोग अटकलें लगाते रहे...एक दूसरे से टोह लेते रहे कि आख़िर ये ''अब्बाजान'' कौन है ? और जब किसी से कोई सुराग़ नहीं मिला तो लोग उनके फ़न पर गुफ़्तगू करने लगे...भई जो भी है मगर है बड़ा क़ाबिल....ऐसा शायिर जो न सिर्फ़ फ़िक्री तौर से बलन्दी पर है बल्कि फ़न के मअयार पर भी खरा उतरता रहता है।

मगर जो लोग इस शख़्स को जानते हैं जो ''अब्बाजान'' का किरदार कर रहा है उन्हे उसकी सलाहियत पर शक नहीं था,वो एक संजीदा शायिर के तौर पर अपना एतबार फेसबुक पर क़ायम कर चुका था.....आइए आज मैं पर्दा उठाए देता हूँ.....ये ''अब्बाजान'' और कोई नहीं बल्कि हम सबके हरदिल अज़ीज़ शायिर जनाब'सालिम शुजा अन्सारी' हैं..... रह गए दंग.....क्यूँ चौंक गए न?.....ऐसे संजीदा शायिर की ये ज़रीफ़ाना सलाहियत बड़ी फ़ितरी लगती है,इज़ाफ़ी नहीं दोहरे करेक्टर को ख़ूबी के साथ जीने वाले सालिम शुजा अन्सारी मुबारकबाद के मुसतहिक़ हैं।

इस राज़ के फ़ाश हो जाने के बअद अभी तक आपकी आँखे हैरत से फैली हुई न रह गई हों तो आइए 'अब्बाजान' उर्फ़ 'सालिम शुजा अन्सारी' की ज़रीफ़ाना शायिरी पर कुछ और बातें करें, सबसे बड़ी ख़ूबी तो उनके कलाम में मुझे ये नज़र आई कि उनकी हज़्लों में हमारी और

आपकी ज़िन्दगी में रूनुमा होने वाले वाक़िआत,सानिहात,हादसात पर तंज़ से मजरूह कर देने वाले अनासिर मौजूद होते हैं जिन से हमारे होंट चौड़े होते हैं वहीं हमारे दिमाग़ की बत्ती भी जल जाती है जहाँ ज़मीर को धचका सा लगता है वहीं हमारे अपने अहसासात की तकमील भी हो गई लगती है।

'अब्बाजान' संजीदा से संजीदा मौज़ूअ में भी मज़ाह का पहलू ढूँड लेते हैं और अल्फ़ाज़ की बन्दिशों से शेअर को इस तरह सजाते हैं कि लगता है नसीम ए सुब्ह में हम सैर कर रहे हैं उनके हँसते,खिलखिलाते मिसरओं में ज़िन्दगी की कर्ब भरी आह भी सुनाई देती है,समाजी ,मज़हबी, सियासी, ख़राबियों पर उनके चोट करने का अन्दाज़ नपा तुला होता है जिसकी वजह से तमाम अश्आर पढ़ने में शगुफ़्ता होते हैं, मज़ाह में वो हलकापन नहीं होता जिस से कलाम पस्तियों का शिकार हो जाता है,.....मैं जिस क़दर 'सालिम शुजा' का मद्दाह हूँ उसी क़दर 'अब्बाजान' का भी, और कभी कभी मैं भी दोहरे किरदार को जीने की कोशिश करता हूँ जिस में अफ़सोस नाक तरीक़े से नाकामयाब हो जाता हूँ और क्यूँ न होऊँ, आख़िर ऐसा काम तो सिर्फ़ 'सालिम शुजा अन्सारी' के बस में ही है.....हरकस ओ नाकस के नहीं।

उनका मजमूआ यक़ीनन ख़वास ओ अवाम में मक़बूल होगा, अब देखना ये है इस हाड़ माँस के शख़्स पर कौन ग़ालिब आता है 'सालिम शुजा' या 'अब्बाजान'।

"डा. मुहम्मद आज़म"

"मसऊद हस्सास"
अलशरक़– कुवैत
फोन 0096597597129

नहम्दुहू वनुसल्ली अला रसूलिहिल करीम.....अम्माबअद

अब्बाजान.... (तस्वीर का दूसरा रुख़)

फ़ेसबुक पर एक मजहूल क़िस्म की तस्वीर लगाए "अब्बाजान" की आई.डी. के सिलसिले में अहक़र भी तजस्सुस का शिकार था कि इसी दौरान मुहतरम जनाब "सालिम शुजा अन्सारी" साहब से मरासिम ने गहरे तअल्लुक़ात के जामे पहन लिए दौराने गुफ़्तगू मौसूफ़ ने इन्तिहाई साफ़गोई से कहा कि मैं फ़ेसबुक पर सिर्फ़ दो चार हज़रात से मुलाक़ात और उनके तब्सिरों की ग़रज़ से ही अपनी ग़ज़लें पोस्ट करता हूँ जिनमें एक आप भी हैं, गुफ़्तगू को मज़ीद तूल देते हुए फ़रमाया कि एक बार एक इन्ति –हाई मुअतबर शख़्सियत से असना ए गुफ़्तगू मअलूम हुआ कि आँजनाब बज़ाते ख़ुद ग़ज़लों पे तब्सिरे नहीं करते बल्कि कोई और साहब हैं जो ये कारे ख़ैर अन्जाम देते हैं तो मौसूफ़ ने इन्तिहाई दिलेरी से कहा..मुहतरम ख़ुद़ारा आज से आप मेरी ग़ज़लो का रुख़ न कीजिएगा.....जब इस तूल ने मज़ीद तवालत इख़्तियार की तो मौसूफ़ गोया हुए मसऊद भाई मैं आप से सिर्फ़। वाह वाही का ख़्वाहाँ नहीं बल्कि खुशी इस सूरत में दोचंद होगी कि आप मेरी ग़ज़लों को नाक़िद की निगाह से देखें और उस पर हर जहत से बात करें ख़्वाह वो मन्फ़ी ही क्यूँ न हो.....बात आई गई ख़त्म हुई।

चन्द रोज़ बअद फ़ोन पर "सालिम" साहब से दोबारा हमकलामी का शरफ़ हासिल हुआ और एक मरहला ऐसा आया कि सालिम साहब ने दुई का पर्दा उठाते हुए "अब्बाजान" से मुलाक़ात करवा दी,दलील के तौर पर चन्द मिनट बअद "अब्बाजान" की आई.डी. से मुझे मैसेज भी किया, अब मेरी निगाह में "सालिम शुजा अन्सारी"या"अब्बाजान" एक ही तस्वीर के दो रुख़ थे यानि कह रहे हों....

कहानी है अभी बाक़ी....ज़रा ठहरो मिरे भाई
तुम्हें तस्वीर का मैं दूसरा रुख़ भी दिखाता हूँ (हस्सास)

बड़ी नाइंसाफ़ी होगी अगर इस बात का तज़किरा न किया जाए कि कमाले फ़न ये नज़र आया कि "सालिम" अपनी मिसाल आप थे और "अब्बाजान" यगानाए रोज़गार बने हुए थे। ख़ाल ख़ाल ऐसा होता है कि लोग किसी और चोग़े में अपना कलाम पेश करें और उसके साथ मुकम्मल इंसाफ़ भी कर जाऐं ,वाह...वाह...कमाले फ़न का एतराफ़ करते हुए कहना पड़ता है कि "सालिम" भाई ने "अब्बाजान" के किरदार से मुकम्मल इंसाफ़

किया और अख़ीर वक़्त तक किसी को कानों कान ख़बर न हुई कि "अब्बाजान" जैसा कटीला शख़्स अस्ल में फ़ीरोज़ाबाद का ये शर्मीला और तवाज़ुअ पसन्द नौजवान है, गोकि कहने में "सालिम" व "अब्बाजान" एक ही हैं मगर सरसरी मुतालअे से भी ये बात वाज़ह हो जाती है कि दोनों शख़्सियतों के खोल में दो अलग अलग रूहें बसेरा करती हैं,जहाँ "सालिम" अपनी बूक़लमूनी से शेअरी तोजीहात पे कमरबस्ता नज़र आते हैं वहीं "अब्बाजान" मुआ–शरती नक़ायस पे चीं ब जबीं नज़र आते हैं,जहाँ "सालिम" अपने अश्आर में उर्दू मुहासिन का नक़ीब नज़र आते हैं वहीं "अब्बाजान" लोक कहानियों के पैकरे दे ओ मालाई की तस्वीर बन जाते हैं,जहाँ "सालिम" मिज़ाजे हर्फ़ की आबियारी में मसरूफ़ हैं वहीं "अब्बाजान" हर्फ़ों के तीशे से इर्द गिर्द फैले अनासिर पे ज़र्बकारी लगाते हैं,जहाँ "सालिम" अपनी मुतवाज़ुअ जिबिल्लत का उन्वान बन जाते हैं वहीं "अब्बा" एक शमशीरे बर्रा बन के मुख़ालिफ़ीन के सामने सफ़आरा हो जाते हैं,जहाँ "सालिम" अपने हर्फ़ों से शेअरी पैकर तराशने में रेशमी ख़्यालात से इस्तिफ़ादा करते हैं वहीं "अब्बाजान" अपनी ग़ज़लियात में कटीले लफ़्ज़ों के इस्तेमाल पे अपनी इजारादारी तसव्वुर करते हैं, इन तमाम सिफ़ात के पाए जाते हुए भी हक़ीक़त यही है कि "सालिम" ही "अब्बाजान" हैं और "अब्बाजान" ही "सालिम" हैं।

"सालिम शुजा अन्सारी" के यहाँ जहाँ इन्शाइय्यत अपने जौबन पर नज़र आती है उन्होने "सालिम" व "अब्बाजान" के पर्दे में ऐसी ऐसी नज़्मे,ग़ज़ले,मज़ामीन,दोहे, और रुबाईयात तख़्लीक़ कीं है कि जिनकी साख़्त इन्तिहाई दीदाज़ेब और दिलफ़रेब है उसमें अल्फ़ाज़ की बुनत का ऐसा फ़न बरता गया है कि जिस पर जवाहर पारे का गुमान होता है कहीं कहीं तो ऐसे जुमले पे मुशतमिल मिसरे दस्तयाब हो जाते हैं जिन्हें ज़र्ब उल मिसाल के जुमरे में रखा जाना यक़ीनी माना जाता है और दूसरी जानिब यही "सालिम" जब शेअरी पैकर तराश कर क़ारी या सामअ के हवाले करते हैं तो महसूस होता है कि वो रेशमी रूमाल को अँगूठी के दरमियान से गुज़ार भी रहे हैं और नग़मगी के बदन पर ख़राश तक नहीं आने दे रहे हैं उनके जुमले इतने आमो फ़हम, सलीस,ज़बाँज़द होते हैं मानो वये रोज़मर्राह की ज़बान पे मुशतमिल होते हुए अदबे आलिया का एलानिया भी हैं।

मेरे इस पैराग्राफ़ का ये क़तई मतलब न अख़्ज़ किया जाए कि "सालिम" की शख़्सियत इन ही दो सितून पे उस्तवार है बल्कि "सालिम" उस पारह सिफ़त शख़्स का नाम है जो अपने अश्आर में ऐसे नऐ नऐ जहान की सैर कराता है जो अपनी मिसाल आप होते हैं.....

"मसऊद हस्सास"

"डा. आदिक भारती"
बत्रा कॉलोनी,सोनीपत
हरियाणा–131001

अब्बाजान.... (मेरी नज़र में)

मुझे ये जानकर बहुत मसर्रत हासिल हुई कि 'शायिर कलब' ने फेसबुक की अज़ीम शख़्सियत जनाब 'अब्बाजान' के शेअरी मजमूअे को मन्ज़र ए आम पर लाने का बीड़ा उठाया है और ऐसा करके अदबी और अख़्लाक़ी फ़र्ज़ भी अदा किया,जिसके लिए एडमिन्स के साथ 'शायर कलब' के तमाम मेम्बरान मुबारकबाद के मुस्तहिक़ हैं।

'अब्बाजान' ...फ़ेसबुक पर बहुत ही मक़बूल ओ मशहूर शख़्सियत हैं, अहले ग़ज़ल, अहले नज़्म, अहले हज़्ल,और अहले फ़न होने के साथ साथ वो एक इन्सानी और अख़्लाक़ी फ़ितरत के अहल भी हैं,वो एक साफ़गो और ज़िन्दादिल इन्सान होने के अलावा दबंग फ़ितरत भी रखते हैं,...ईट का जवाब पत्थर से देने में उनका कोई सानी नहीं,लेकिन उनके जवाबी पत्थर भी फूल की तरह नाज़ुक और ख़ुश्बूदार होते हैं और उनका यही मख़सूस अन्दाज़ उनको औरों से अलग करता है,उनकी असलियत और ज़ाती शख़्सियत पर कुछ धुंधलका ज़रूर है लेकिन उनकी फ़न्नी क़ाबिलियत का चमकता सूरज हर धुंधलके को दूर करके उनका दरख़शाँ अदबी चेहरा सबके सामने वाज़ह कर देता है,एक शायिर की असली पहचान उसकी शायिरी होती है और 'अब्बाजान' की बेनज़ीर और बेमिस्ल शायिरी उनके वजूद को पुख़्तगी के साथ पेश करती है और यही शायिर और शायिरी का कमाल है जो सर चढ़ के बोलता है और ख़ूब बोलता है।

जहाँ तक 'अब्बाजान' की असली पहचान की बात है मुकम्मल उम्मीद है कि ये तहरीर मुकम्मल होते होते ये धुंधलका छंट जाएगा और 'अब्बाजान' का असली चेहरा यानी झबरे बालों की जगह घने बाल, संजीदा चेहरे की जगह मुस्कराता हुआ चेहरा सामने आ जाएगा, जिस चेहरे पर तवील दाढ़ी की जगह सलीक़े से छाँटी गई दाढ़ी होगी,क्यूँकि मैं भी औरों की तरह इस बात पर यक़ीन रखता हूँ कि उम्मीद पर दुनिया क़ायम है ।

अब 'अब्बाजान' की तख़लीक़ात पर भी कुछ तब्सिरा कर लिया जाए,यूँ तो हर सिन्फ़ में कहना उनके बाऐं हाथ का खेल है लेकिन तंज़ो मज़ाह में उनके क़लम और कलाम का कोई जवाब नहीं,दीगर शायिरों की शायिरी और उनके शायिराना मिज़ाज पर उनका तंज़ क़ाबिल ए तहसीन है।

अबजद के चार हर्फ़ भी जो जानता नहीं
उस शख़्स को है मेरी लियाक़त पे ऐतराज़

दो चार शेअर कह के ही जो हाँपने लगे
करता है वो ग़ज़ल की तवालत पे ऐतराज़

अपने हमअस्र शायिरों के लिए उनके ये अश्आर उनकी मुहब्बत की मिसाल हैं।

'आदिक' हैं मेरे रेशमी बालों पे मुअतरिज़
'हस्सास' को भी है मिरी सूरत पे ऐतराज़
छोड़ कर शेअर ओ शायिरी 'आदिक'
तुम रह–ए–हरिद्वार लेते काश
दें किराया मकान का 'हादी'
मेरी दौलत जो खा गए आधी
'सरवत' कई दिनों से नज़र आ नहीं रहे
हर शख़्स ख़ुश है उनको तड़ीपार देखकर
रास आता नहीं 'आज़म' को किसी भी सूरत
ख़ुद से बढ़कर किसी शायिर का सुख़नदाँ होना

मैं फ़ेसबुक के कई शेअरी ग्रुप्स में 'अब्बाजान' की ग़ज़लों ,नज़्मों और हज़्लों से रू बरू हुआ हूँ,मैं उनकी पुख़्ता फ़िक्र,फ़न्नी इल्म,और अन्दाज़े बयान का तहे दिल से क़ायल हूँ,संजीदा शायिरी हो या तंजो मज़ाह हो,हर सिन्फ़ में उनकी कुदरत और छाप बिला शक नज़र आती है और यही एक उम्दा शायिर की पहचान होती है।

इस मज़मून के ख़त्म होते होते 'अब्बाजान' की पोशीदा शख़्सियत से पर्दा उठ गया है और ये जानकर मुझे मसर्रत के साथ साथ फ़ख़्र भी महसूस हो रहा है कि 'अब्बा जान' कोई और नहीं मेरे बहुत ही प्यारे दोस्त जनाब 'सालिम शुजा अन्सारी' साहब हैं, सालिम साहब की शायिरी का मैं शुरूअ से ही मुरीद रहा हूँ,उर्दू,हिन्दी,दोनों ज़बानों में उनको बराबर की महारत हासिल है,उनकी फ़िक्री परवाज़,फ़न्नी लियाक़त और पुर–ख़ुलूस फ़ितरत उनको एक अज़ीमुश्शान शख़्सियत के साथ साथ एक उस्ताद शायिर का रुतबा भी अता करती है,सालिम साहब की बाकमाल ओ लाजवाब ग़ज़लों से मैं कई मरतबा रू बरू हुआ हूँ,और उनका कलाम पढ़कर मेरे दिल को हमेशा ही सुकून हासिल हुआ है, मुझे मुकम्मल यक़ीन है कि उनका ये शेअरी मजमूआ भी उनके दीगर मजमूओं और उनकी शख़्सियत की तरह ही अवाम में मक़बूल होगा

मैं उनकी कामयाब और ख़ुशनुमा ज़िन्दगी और तवील उम्र के लिए दुआ करता हूँ.....आमीन।

"डा. आदिक भारती"

हृदयेश शुक्ल "हुमा कानपुरी"
F12/1, पी.डब्ल्यू.डी. स्टाफ क्वार्टर,
निकट राजभवन, भोपाल (म.प्र.)

पर्दाफ़ाश....

मैं आज जिस शख़्स का पर्दा फ़ाश करने जा रहा हूँ उसे फ़ेसबुक की दुनिया "अब्बाजान" के नाम से जानती है,मैं इस से पहले कि सीधे सीधे कुछ अर्ज़ करूँ फिल्म के फ्लैश बैक की तरह आपको पीछे ले जाना चाहता हूँ। ये उस वक्त की बात है जब मैं फ़ेस बुक की शेअरी दुनिया में अपनी जगह बना रहा था,कुछ महीने रहने के बअद एक ग्रुप 'ढाई अक्षर प्रेम के' मेरी बदतमीज़ी को बर्दाश्त न कर सका और रातों रात मैं उस ग्रुप से बाहर निकाला गया हालांकि ग्रुप एडमिन की नज़र में की गई बदतमीज़ी मेरी निगाह में मेरी हक़ बयानी ही थी, कुछ अफ़सोस हुआ..मगर इस ग़म से बाहर निकलना तो था ही. एक ग्रुप 'शायर कलब' जिसके क्रियेटर 'हादी जावेद' साहब हैं ने मुझे बहुत पहले अपने ग्रुप से जोड़ा था और वक्तन फ़वक्तन मैं वहाँ भी अपना कलाम चिपका (पोस्ट) देता था फ़आल हुआ, फ़आल होने की एक ख़ास वजह ये भी थी कि इस में तक़रीबन वही मेम्बर्स थे जो पहले वाले ग्रुप के थे जिसमें से मैं रातों रात लतिया दिया गया था।मैंने अपनी ग़ज़ल पोस्ट करना शुरूअ की,लोगों को पसन्द आई,असातिज़ा की दाद ने मेरा मन मोहा और मुझे लगा कि यहाँ नया घर बसाया जा सकता है,तो साहब ग़ज़ल कहता और शायर कलब में भी चिपकाता जाता, शायर कलब में भी खूब तअरीफ़ें होतीं, ये वो प्लेटफ़ार्म था जहाँ नए नए फ़न पर गुफ़्तगू करने वाले जो मुझसे जूनियर भी हैं और उस ग्रुप में भी शामिल थे जहाँ से मुझे निकाल दिया गया था,मुझे मिले इनमें से किसी ने अपनी आलिमाना गुफ़्तगू और मेरे शेअरों पर तनक़ीद करके मुझपर अपना रअब गाँठने की कोशिश की, कोई मेरी ज़ात को नाक़ाबिले क़ुबूल मानते हुए आगे बढ़ने में मुझे धक्का देने के अमल में लग गया,आगे बढ़ने में भी आगे बढ़ने का अमल मुझे कम लगा,ऐसा लगा जैसे धक्का मार के लोग आगे बढ़ रहे हों, जिन्हे सिर्फ़ अपनी परवा है इन सबसे अलग हट कर एक किरदार मुहतरम "सालिम शुजा अन्सारी" साहब (फ़िरोज़ाबाद) का भी नुमायाँ हुआ, जिन्होने मेरी ग़ज़ल में होने वाले मअमूली अग़लात के लिए मुझे 1–2 बार टोका,मुझे पहले पहल तो ये शक हुआ कि किसी साज़िश के तहत मुझ पर ये हमले हो रहे हैं,हालांकि "सालिम साहब" का लहजा अपने को आलिम जताने का कभी नहीं रहा,उन्होने एक बार के कमेन्ट में ये भी कहा कि ये ग़लती आप से कैसे हो गई जिसकी हम उम्मीद नहीं करते हैं लगता है ऐसा जल्दबाज़ी में हुआ,मैंने पहले की तरह उनका शुक्रिया अदा किया

और जहाँ मुझसे चूक हुई थी उसे सुधार लिया,एक तरफ़ अपने को आलिम जताने का माहौल था दूसरी तरफ़ "सालिम साहब" के तरीक़े से मुख़्लिसाना इशारे किये जाते थे जिस से मैं "सालिम साहब" के टैलेण्ट का मद्दाह हो गया, मैंने "सालिम साहब" के कलाम को ग़ौर से पढ़ना शुरूअ किया,मुझे उसमें फ़न के लिहाज़ से कोई कमी नज़र नहीं आई ख़ूबी ये दिखी कि आपका लहजा मुन्फ़रिद है और मफ़हूम के लिहाज़ से आप आज के कई शायिरों से मीलों आगे दिखाई दिए,उन लोगों से भी जो 'शायर कलब' में शेअरों में कमियाँ तो निकाल रहे थे लेकिन आप की तरह अच्छे शेअर की तअरीफ़ करने का अपना अहम फ़रीज़ा भूले हुए थे,रफ़्ता रफ़्ता मेरी ग़ज़लों की पोस्टिंग का सफ़र जारी रहा.....इसी बीच ये भी हुआ कि मैं अपनी साफ़ गोई जो दूसरों की नज़र में बदतमीज़ी होती थी, की वजह से 'शायर कलब' से भी बिना किसी ठोस वजह के बाहर कर दिया गया, जब कि मैं ने एसा कोई काम नहीं किया था जिसके लिए मुझे शर्मिन्दा होना पड़े, ख़ैर एडमिन की महरबानी से एक दिन बअद ही हक़ीक़त से रूशनास होने पर मुझे फिर एन्ट्री मिल गई और मैं शायर कलब में फिर अपनी पोस्टिंग लगाने लगा.....

इसी बीच मुझे यकायक एक दिन 'शायर कलब 'में "अब्बाजान" की पोस्ट दिखाई दी मैंने उसे पढ़ा, तंज़ो मज़ाह पर मुन्हसिर अच्छे कलाम के बावजूद मैं इसके लिए अपने दिल में क़द्र पैदा न कर सका,क्योंकि मुझे लगा कि ये शख़्स फ़र्ज़ी आई.डी. से एन्ट्री पा चुका है, मुझे इस बात से कोफ़्त हुई, मेरा ये सवाल रहा है कि तंज़ो मज़ाह के कलाम की अपनी एहमियत है तो लोग अपनी शिनाख़्त दुनिया से क्यूँ पोशीदा रखना चाहते हैं मैंनें दिल ही दिल में इसे एडमिन्स की ग़लती माना.....

इस बीच मेरे मरासिम संजय शौक़ साहब(लखनऊ),सालिम शुजा अन्सारी साहब और हादी जावेद साहब (फ़िरोज़ाबाद) से इतने पुख़्ता हो गए कि मैं इन सब से सेल फोन पर बात करने लगा, संजय शौक़ साहब मतीन शख़्स है,सालिम साहब भी उस वक़्त तक कमगो ही दिखाई देते थे, इस लिए मुझे घोर हैरत हुई कि इन जैसे लोगों के सामने लोग फ़र्ज़ी आई.डी. से एन्ट्री पा रहे हैं और ये हज़रात खुशी खुशी "अब्बाजान" की पज़ीराई में लगे हुए हैं हालांकि मैंने "अब्बाजान" के टैलेण्ट की संजय शौक़ साहब से तअरीफ़ की तो उन्होने भी माना कि कोई फ़न का जादूगर है , मुझे शक हुआ कि हादी साहब ने ही किसी शख़्स को "अब्बाजान" की शक्ल में खड़ा किया है, मैंने कुछ दिन तक "अब्बाजान" को पढ़ना तो जारी रखा मगर कमेण्ट नहीं किया, हालांकि मैं "अब्बाजान" के कलाम से लुत्फ़ अन्दोज़ हो रहा था, मुझे लगा कि मेरा शक ठीक नहीं है ये हज़रत फ़र्ज़ी नहीं हैं, तो मैं ने "अब्बाजान" की पोस्टिंग पर मुख़्तसर कमेण्ट इस ग़रज़ से डाले कि कभी न कभी तो ये शख़्स खुलकर बोलेगा और मैं इसे पहचान जाऊँगा, मैंने हल्के फुल्के तंज़ इस लिहाज़ से किए कि गुस्से में असलियत खुल जाएगी, हुआ भी यही कि मेरे तंज़ पर मुझे करारा जवाब दिया गया मैंने भी जवाबन अर्ज़ किया कि हुज़ूर !मैं तो तुकबन्द ठहरा जिस दिन मैं पुख़्तागो हो गया आपसे आँख से आँख मिला कर बात करूँगा,जवाब में मुझसे जो कहा गया उस से

'फ़ेसबुक' के अब्बाजान

शायिरी (तंज़ ओ मिज़ाह) हास्य व्यंग

सालिम शुजाअ अन्सारी

मुझे रास्ता मिल गया, मुझसे कहा गया कि.. नहीं आप तुकबन्द शायर नहीं एक अच्छे शायर हैं,मैं आपकी क़द्र करता हूँ.....इससे मिलते जुलते अल्फ़ाज़ "सालिम शुजा अन्सारी" साहब मेरे लिए इससे पहले मुझसे कम अज़ कम दो बार इस्तेमाल कर चुके थे,यहाँ मैं ये बात बताना चाहता हूँ कि इस दौरान मैंने" सालिम शुजा अन्सारी" साहब की कई ग़ज़ले पढ़ीं , मैंने पाया कि आप शेअर बरजस्ता कहते हैं " सालिम" साहब का ये हाल था कि कभी "अब्बाजान" से उलझते, कभी उनकी फोटो की तअरीफ़ करते ,कभी उन पर डिज़ायनिंग का काम करते.. डिज़ायनिंग और फोटो से मुझे "सालिम" साहब पर शक हुआ,क्यूँ कि प्रोफ़ाइल फोटो और "अब्बाजान" के दीगर फोटो का इन्तिख़ाब क़ाबिले दाद था, मैंनें "अब्बाजान" की चौकसी करना शुरू कर दी कि कभी न कभी तो क्लू मिलेगा,एक दिन वो हसीन ग़लती हुई कि..... "अब्बाजान" पकड़े गये.....

मैंने देखा कि... "अब्बाजान" की पोस्टिंग लगते ही बजाए "अब्बाजान" के "सालिम" साहब ने अपनी बात"अब्बाजान" के तौर पर लिखी जो मुझे लगा कि "सालिम"साहब की चूक थी, वो ये समझ रहे थे कि वो "अब्बाजान" की आई.डी. से पोस्टिंग कर रहे हैं, जबकि वो "सालिम" की आई. डी. थी.....मुझे 90 %यक़ीन हो गया कि "अब्बाजान" कोई और नहीं मुहतरम "सालिम शुजा अन्सारी" साहब हैं,मैंने एक बार हादी साहब से शक का इज़हार किया उन्होने कहा कि नहीं ये वो नहीं हैं मैं चुप रह गया, और हादी साहब ने भी चुप्पी साध ली,मैं ये जान चुका था कि हादी साहब झूट तो नहीं बोल रहे हैं लेकिन जानते सब हैं,मैंने संजय शौक़ साहब से भी बात की तो उन्होने भी कुछ इत्मीनान बख़्श जवाब नहीं दिया, मैंने अपने शक वाली बात भी उन्हे बताई वो हाँ हूँ करके रह गए, मैंने इतना समझ लिया कि इस कारनामें में मुहतरमीन संजय शौक़,सालिम शुजा अन्सारी,हादी जावेद साहिबान के हाथ हैं।

इस बीच 'सिया सचदेव'साहिबा (बरेली) से भी मैंने अपने पुख़्ता शक होने की बात बताई उन्होने भी कहा कि मुझे भी ऐसा ही लगता है, इस बीच "अब्बाजान" साहब मेरी फ्रेण्ड लिस्ट में आ गए,उन्होने मुझे मुख़ातिब किया और मैंने उन्हें जवाब में "सालिम" साहब कहा ! हालांकि उन्होने मुख़ातिबत की तरदीद करके "सालिम"साहब से कोई सिलसिला न होने की बात कही लेकिन मैं नही माना,उन्होने बात ही बात में मुझे 'जेम्स बॉण्ड' कहा, मैं समझ गया "सालिम" साहब इस तरह मेरी पज़ीराई कर रहे हैं लेकिन बताना नहीं चाहते।

"सालिम" व "अब्बाजान" की बहुत सी बातें मिलती जुलती सी मुझे लगती थीं, एक दिन मैंने "अब्बाजान" से चैट पर कहा.....कि आप अपना कलाम "अब्बाजान" बन कर क्यूँ ज़ायअ कर रहे हैं , आपकी कौन गवाही देगा कि ये शानदार कलाम किस ने तख़्लीक़ किया है, उन्होने कहा कि वक़्त आने पर मैं सबके सामने आ जाऊँगा,लेकिन मैं "सालिम" नहीं हूँ मैंने हँसकर फिर इन्कार कर दिया कि नहीं ....आप "सालिम" साहब ही हैं,....मैंने उन्हे याद दिलाया कि एक बार "अब्बाजान" ने कहा था कि मैं किसी "सालिम, आलिम,ज़ालिम" से नहीं डरता, मैंने कहा, "फ़ेसबुक पर इतनी किसी की जुर्रत नहीं जो "सालिम शुजा अन्सारी "साहब

से इस लहजे में बात कर सके, और "सालिम"साहब चुप रहें, वो तो "माल की रसीद फ़ौरन देते हैं" एक दिन "अब्बाजान" साहब से मेरी फिर चैट हुई उन्होने कहा कि अगर किसी को न बताओ तो मैं एक राज़ आपको बताना चाहता हूँ ,मैंने उनके बताने से पहले ही कह दिया कि आप मुझे अपनी ओरिजिनल शिनाख़्त बताना चाहते हैं कि मैं ही "अब्बाजान"हूँ , उन्होने जवाब में मुझे फिर 'जेम्स बॉण्ड' कहा,मैंने कहा कि आप मुझे इसी टॉपिक पर दो बार 'जेम्स बॉण्ड' कह चुके हैं ,आप ही "सालिम शुजा अन्सारी " हैं और आप ही "अब्बाजान" भी हैं, तब मैंने उन्हे वो बात भी बताई जब मुझे "सालिम" साहब पर 90% शक हुआ था, उन्होने हँसते हुए मेरी बात मान ली और मुझसे वअदा भी लिया कि मैं मजमूआ ए कलाम के इजरा तक इस राज़ को राज़ रखूँ, उन्होने उन लोगों के नाम भी बताए जिन्हे "अब्बाजान" के सिलसिले में शुरूआत से जानकारी थी।

मुझे ख़ुशी है कि उनका मजमूआ मंज़रे आम पर आ रहा है, एक तन्ज ओ मज़ाह का सरमाया महफ़ूज़ हुआ,इससे ये भी साबित होता है कि इन्सान में बयक वक़्त कई तरह के रंग मौजूद हो सकते हैं,जिस से वो अपनी शेअरी तस्वीर में जिस तरह चाहे रंगों का इस्तेमाल कर ले आख़िर में ,मैं"अब्बाजान" यानी "सालिम शुजा अन्सारी " साहब को उनकी इस पुख़्ता गोई और उनके इस अछूते किरदार के लिए भी दिल की गहराइयों से नेक ख़्वाहिशात पेश करता हूँ और अपनी बात उनके चन्द अश्आर पर ख़त्म करता हूँ।

सोचते हैं इस तरह दे देंगे धोका मौत को
उम्र अस्सी हो चुकी पर बाल काले चाहिये
फितरत का इलाज आज भी मुमकिन नहीं कोई
पैदा नहीं होता है शऊर अब भी दवा से
मैसेज लिख के मुझसे 'सिया' ने ये कल कहा
'मीनू' को भी 'हुमा' की है नीयत पे एतराज़
नहीं है बन्दिश दिमाग़ पर भी,नहीं तख़य्युल पे जब्र कोई
जो ला शऊरी है कार फ़रमा, करे शऊर अपना काम साहिब
तल्ख़ी तिरे कलाम की भाने लगी 'हुमा'
मोहित हुआ हूँ मैं तिरा व्यवहार देखकर
बैट्री हो गई डिस्चार्ज जब इक आशिक़ की
कैसे मुमकिन है शब ए वस्ल चराग़ाँ होना

हृदयेश शुक्ल "हुमा कानपुरी"

"असलम अदीब"
नज़्द लालपुर सब्ज़ी मण्डी
आसिफ़ाबाद, फ़िरोज़ाबाद

अब्बाजान.... (मेरे दोस्त)

जहाँ तक 'अब्बाजान'यानी' सालिम शुजा अन्सारी' का तअल्लुक़ है तो उनसे मेरे मरासिम अर्साए दराज़ से हैं, वो हमारे शहर में अपनी ख़ुश अख़्लाक़ी,हाज़िर जवाबी साफ़गोई के सबब हर दिल अज़ीज़ हैं उन्होने अपनी शायरी के ज़रिए बहुत कम वक़्त में सारी दुनिया में अपना एक मक़ाम बना लिया है जहाँ' सालिम' अपनी फ़न्नी सलाहियत के सबब अदबी हल्क़े में मशहूरो मारूफ़ हैं वहीं उनका दूसरा रूप 'अब्बाजान' की शक्ल में तंज़ो मज़ाह के नए नए मरहले तय कर रहा है।

' सालिम शुजा अन्सारी' साहब की शायिरी के मुतअल्लिक़ तमाम अहले नज़र हज़रात ने अपनी राय अपने मज़ामीन के ज़रिये ज़ाहिर कर दी है लिहाज़ा मैं उन्हें दोहराना नहीं चाहता बल्कि मैं इस मज़मून के ज़रिये उनसे अपनी क़ुरबत को ज़ाहिर करना चाहता हूँ,'मुझे फ़ख़्र है कि मैं उनका सबसे क़रीबी दोस्त हूँ, मैं उन्हें कई बरसों से जानता हूँ और हर लम्हा उनकी तरक़्क़ी का गवाह भी, उनकी ख़ुदादाद सलाहियतों का लोहा मानना लोगों की मजबूरी है, बरवक़्त ग़ज़ल रुबाई नज़्म कहना उनके लिए आम बात है, मिस्रा मुकम्मल होने से क़ब्ल ही बहरो तक़्तीअ वाज़ह कर देना उनकी मश्शाक़ी की दलील है,हैरत तो तब होती है जब उनके हरीफ़ भी उनसे ख़ाइफ़ नज़र आते है, न जाने कितने ही ख़ुदसाख़्ता उस्तादों का भरम सिर्फ़' सालिम शुजा अन्सारी' ने तोड़ दिया, कोई भी ग़ज़ल कभी दोबारा नहीं पढ़ी बरसरे मुशायरा फ़िलबदीह शेअर कह कर पढ़ने में ' सालिम' का सानी आस पास नज़र नहीं आता,बेहद सुकून बख़्श बात ये है कि अवाम के साथ साथ वो अहले इल्म हज़रात जो ख़वास के ज़ुमरे में आते हैं नशिस्त में शिरकत करने से क़ब्ल' सालिम शुजा अन्सारी' की शिरकत की तस्दीक़ कर लेते हैं,किताबों रिसालों में उनका कलाम बेहद अहतिमाम के साथ शायअ होता रहा जिस से उनकी शौहरत बर्रे सग़ीर तक एक मुअतबर शायिर की हैसियत से पहुँची,मैं दअवे के साथ बयान करता हूँ कि' सालिम शुजा अन्सारी' जैसे फ़नकार कभी कभी वजूद पाते हैं, किसी एक शख़्स में हमाँ वक़्त कई फ़ुनून यकजा होना अल्लाह की अता के सिवा और क्या हो सकता है वो एक बेहतरीन शायिर तो हैं ही मगर इसके साथ साथ एक बेपनाह पेन्टर,आर्टिस्ट, और ख़त्तात,भी हैं ये' सालिम शुजा अन्सारी' की ही मेहनत का फल है जो इस सिनअती शहर में उर्दू के कार्ड, पोस्टर, लेबिल दिखाई पड़ते हैं, अपने इस फ़न में भी ' सालिम शुजा अन्सारी'साहब लाजवाब हैं और तमाम शहर एक आवाज़ में उनकी

इस सलाहियत का बखान करता है।

' सालिम शुजा अन्सारी' की हरदिल अज़ीज़ी का एक जली सुबूत ये है कि हर फ़िरक़े हर तबक़े के अहले इलम हज़रात उन्हें इज़्ज़त की निगाह से देखते हैं और यहाँ तक कि हर ग्रुप के शोअरा उन्हें अपने मुशायरों में मदऊ करते हैं और वो बिला तफ़रीक़ सबके यहाँ जाते भी हैं, 'सालिम' को उर्दू अदब की बेबहा ख़िदमात के सिलसिले में दीगर बज़्मों और सोसाइटियों ने उन अवार्ड और एज़ाज़ात से नवाज़ा जो उनसे पहले किसी शायिर को मयस्सर नहीं हुए,अलीगढ़ जैसे अदबी गहवारे ने भी सालिम की शायिराना सलाहियतों के एतराफ़ में उन्हें 'शहज़ादा ए फ़न' और 'आफ़ताब ए सुख़न' के एज़ाज़ात से नवाज़ा।

मुसव्विरी,शायिरी मुदर्रिसी के सिलसिले से हर वक़्त उनके यहाँ लोगों का आना जाना लगा रहता है और तवाज़अ पसन्द ' सालिम' सबके साथ अपना ख़ुलूस बाँटते हैं। मुझे ये शरफ़ हासिल है कि वो मुझे अपना सबसे क़रीबी दोस्त तस्व्वुर करते हैं,उनकी इस ख़ुश अख़्लाक़ी के पसे पर्दा जो शख़्सियत कारफ़रमा है वो उनकी अहलिया मुहतरमा हैं जिनसे वो बेहद मुहब्बत करते हैं, ' सालिम' पर अल्लाह की ये एक बड़ी मेहरबानी है जो सबके मुक़द्दर में नहीं,जब हमसफ़र हमख़्याल हो तो हर सफ़र आसान हो जाता है और यही सालिम के साथ भी है बेशक उनकी कामयाबी के पीछे उनकी रफ़ीके हयात का ही हाथ है वो हर क़दम पर सालिम 'का साथ बख़ूबी देती हैं और उनकी हर ख़ुशी का ख़्याल ख़ुशी से रखती हैं, कई मरतबा मुझे उनके घर जाने का इत्तिफ़ाक़ हुआ है तो मैंने पाया कि घर जन्नत शायद इसी को कहते हैं....

' सालिम शुजा अन्सारी' के अन्दर जो मासूम शरारतें पिन्हा थी वो आज एक फ़र्ज़ी किरदार 'अब्बाजान' की शक्ल में ज़ाहिर हैं, जिस मिज़ाज से सिर्फ़ मैं और चन्द ही अहबाब वाक़िफ़ थे आज तमाम दुनिया वाक़िफ़ होने जा रही है मैं दुआ करता हूँ कि उनका ये मजमूआए कलाम भी गुज़िश्ता मजमूओं की तरह इज़्ज़त की नज़र से देखा जाए और अहले अदब पर उनकी शख़्सियत का एक और रंग उजागर हो।

इस किताब की इशाअत पर मेरी तमाम नेक ख़्वाहिशात हाज़िर हैं...

"असलम अदीब"

"अमीम जाफ़री"
130/530,बाक़र गंज बाज़ार
बाबू पुरा पुलिस चौकी के ऊपर
कानपुर नगर

अब्बाजान....(मील का पत्थर)

मैने पहली दफ़ा फ़ेसबुक पर जब एक आई.डी. देखी जिसने खुद को "अब्बाजान" लिखा हुआ था तो मुझे थोड़ी हैरत हुई और यूँ लगा कि शायद किसी ने हँसी मज़ाक़ करने के लिए ऐसे ही आई.डी. बना ली है.... धीरे धीरे मैं इस आई.डी. की पोस्टिंग को पढ़ने लगा, और मुझे ये अहसास पूरी तरह हो गया कि ये कोई आम इन्सान या आम शायिर नहीं है, तन्ज़ो मिज़ाह हो या सन्जीदगी भरी बातें सब कुछ इस क़लम से ऐसे निकल रहा है जैसे शायिरी बाऐं हाथ का खेल है....मैं पढ़ता गया,पढ़ता गया और मुझे हर बार एक अजीब सी हैरत होती थी कि ये शख़्स कितना ज़हीन है जिसे अल्फ़ाज़ से खेलने का हुनर मअलूम है...ऐसे ऐसे क़ाफ़ियों का इस्तेमाल कि क्या कहा जाए। "अब्बाजान" ने एक मज़ाहिया ग़ज़ल, जिसकी रदीफ़ 100 थी लिखी थी उसको पढ़कर मेरा ज़हन हैरतज़दा हो गया यक़ीनन जहाँ जहाँ सूरज की किरने नहीं पहुँचती वहाँ से इस शायिर ने बात की।

सच पूछिए तो मुझे ये जानने में कोई दिलचस्पी नहीं थी कि ये आई.डी. किस की हो सकती थी यूँ लगा कि शायद जानने के बअद मैं उसकी शायरी को नज़र अन्दाज़ करने लगूँगा और फिर मुझे सीखने को कुछ नहीं मिल सकेगा,इस लिए मैंने तजस्सुस को हमेशा बरक़रार रखा..हालांकि लोग हमेशा इसी खोज में थे कि आख़िर ये शख़्स कौन है जहाँ तक एक तरफ़ कुछ कम अक़्ल लोग उनसे हँसी मज़ाक़ किया करते थे वहीं दूसरी तरफ़ बड़े बड़े उस्ताद शायरों ने उनका लोहा मान लिया और उन्हे "अब्बाजान" कहने में ज़रा भी शर्म या झिझक महसूस नहीं की, तो फिर मुझ जैसे हक़ीर की क्या बिसात थी कि इस अज़ीम हस्ती को "अब्बाजान" न कहता। कुइ चीज़े देखने के लिए नहीं बल्कि महसूस करने के लिए होतीं हैं और "अब्बाजान" भी देखने की चीज़ नहीं बल्कि महसूस करने की चीज़ थे....मैं उन्हे और उनकी शायिरी को महसूस करता रहा उनके तख़य्युल कभी मुझे सोचने पर मजबूर करते थे और कभी मैं क़हक़हों में डूब जाता था।

अभी हाल ही में मुझे ये मअलूम हुआ कि "अब्बाजान" अब अपने मजमूअे के साथ मन्ज़रे आम पर आ रहे हैं और उन्होने ये भी वाज़ह किया कि वो उस दीवान मेंअपनीअसली शिनाख़्त भी दर्ज करेंगे,तो जिन हज़रात को बेइन्तहा तजस्सुस था वो शायद इस बात पर ज़्यादा दिमाग़ लगाऐंगे कि आख़िर ये कौन हैं? मगर मेरे साथ ऐसा क़तई नहीं, मैं तक़रीबन उस शख़्स तक पहुँच चुका हूँ(?) जो इस आई.डी. का मालिक और ख़ालिक़ है मेरा मानना

है कि शायिर की पहचान उसके अल्फ़ाज़ हुआ करते हैं जिन्हे अगर महसूस किया जाए तो वहाँ तक पहुँचा जा सकता है,मुझे इस बात की ज़्यादा ख़ुशी है कि वो सारी हज़्लें या नज़्में जो उन्होने कही हैं अब सबको एक साथ पढ़ने को मिलेंगी।

ये आई.डी. किसी भी शख़्स की रही हो मैं इस पर तब्सिरा इस लिए नहीं करूँगा क्यूँकि अब ये किताब आपके हाथों में है और आप इसे पढ़ भी रहे हैं और अब इस तजस्सुस से पर्दा भी उठ चुका है मैं ये कहूँगा कि इस शख़्स ने मुझसे हमेशा बेपनाह मुहब्बत की मेरी इज़्ज़त की मुझे अपना अज़ीज़ बेटा माना,तमाम जगहों पर अपनी शायिरी में मेरा ज़िक्र भी किया, मैं कोई इतना बड़ा शायिर नहीं था कि मेरा इतना एहतराम किया जाता मगर भूले से भी "अब्बाजान" ने मेरी इज़्ज़त को कम नहीं किया, मेरे लिए सबसे बड़ा यही एज़ाज़ है।

मैं उम्मीद करता हूँ कि "अब्बाजान" का ये शेअरी सरमाया न सिर्फ़ दुनिया के तमाम इन्सानों के लबों पर मुस्कराहट बिखेरेगा बल्कि तन्ज ओ मिज़ाह के शायिरों के लिए भी एक मील का पत्थर साबित होगा जिससे उन शुअरा हज़रात को इस फ़न के तमाम पेचोख़म सीखने को भी मिलेंगे, "अब्बाजान" की संजीदा ग़ज़लें पढ़ने के बअद शायर को सोचने पर मजबूर होना पड़ेगा कि तख़्य्युल की परवाज़ शायद वहाँ से शुरू होती है जहाँ से "अब्बाजान" बात करते हैं...

किताब की इशाअत पर मेरी तमाम नेक ख़्वाहिशात पेश हैं।

"अमीम जाफ़री"

"Minoo Mansuri"
V. President, Mahila Morcha B.J.P
B-6, Amber Complex-Dashrath Nagar,
Mandsore, M.P.- 458001

ABBAJAAN.....(My Bhaijaan)

My journey on "facebook" began about 2 years back, with my passion for poetry ghazal, nazms etc.....and reading a lot of poets, some famous and established , some novice and less experienced.....this tempted me to try posting some of my own work,definitely very ametaurish. On this journey i tried taking the help of some established poets but i was not completely satisfied.

My passion for reading continued and one fine day i came across a name SAALIM SHUJA ANSARI SAHAB....and i was highly impressed by his flair for writing in such an easy and beautifull manner, simple words which touch your heart and play music to your soul.....On discussing Saalim sahab with friends i got to know that he was THE BEST of all "facebook" poets.

My search for a good teacher fortunately ended in the form of Saalim Sahab,trough a well wisher,and all friends congraculated me on how lucky i was as he is the best....and it was my fortune that Saalim sir agreed to take me as a disciple. He was not just a good teacher who took me under his wings but an equally loving elder brother for whom i always yearned.His simplicity,his loving nature and his selflessness despite his enormous talant makes him stand out in a crowd.It is due to him that my ametaur ghazals take a beautifull and complete form...he has corrected me and taught me the intracacies of writing and saying poetry and is always so very helpful, and it is due to him that my work is being appreciated and liked by so many friends and people on facebook and i have got accolades on my poetry for which i am thankfull and indebted to Saalim sir.

My bond with him grew stronger each day and we got to talking on all aspects of life.....One personality by whom i was totally enamoured on "facebook" is "ABBAJAAN"....his poetry and genre of writing was completely different and unique yet very aapealing.....and "Abbajaan" was a person in disguise with an immense aura to him....I often discussed this with Saalim sir....my bhaijaan , but he always smiled it off saying Abbajaan is like my teacher..but never disclosed anything further...

One day during a telephonic conversation with bhaijaan the topic drifted towards Abbajaan, and finding my bhaijaan in a jovial mood i asked

him to please tell me about Abbajaan's identity as i somehow found that my bhaijaan's way of saying poetry was quite similar to "Abbajaan"..... I was totally shocked to find my prenomination true when bhaijaan disclosed to me that he indeed was Abbajaan.....and then out came the story of Abbajaan's origin. and why bhaijan created this fictious character to bring out the lighter side of his persona..I was completely enthralled by my bhaijaan's capabilities but to write as two different identities for two years on facebook and mantain the disguise and still to be on top of the charts among'st such establised and famous poets was a feat only Saalim sir could attain...My respect for him grew immensely that day.... as i realised that in todays world,where people are ready to stoop to any level to achieve a little bit of name n fame....my Bhaijaan, having so much of talent and capabilities preffered to remain ananomous for such a long time.....this depicts his greatness...his humbleness....he is surely Gods chosen one.....

I pray to the "Almighty Allah" .....that may my Bhaijaan.. reach the pinnacle of successand may Allah give him the name,fame and respect to which he is entitled to and it is my great fortune that i am so close to him ...and i have got an oppurtunity to be a part of his book.....May my relation and this beautifull bond that i share with SAALIM SHUJA ANSARI SAHAB ....grow stronger each day....who is" ABBAJAAN".....to the entire world, but is my loving BHAIJAAN.Best of luck to you and this book and may God bless you always.....My wishes for you.....

"Down sunlit pathways may you travel,all trough life
with hope to light your morning way and peace at journey's end
Though storms may gather here and there
and mists obscure the view
May you never fail to find a little patch of blue
This is my wish for you....that may you have
the power to see a bright horizon
trough the stormy clouds of adversity
For if you have a happy heart to each experience
you will always walk the sunlit paths of providence"

with great regards & love

"Minoo Mansuri"

"हादी जावेद"
गली इमाम बाड़ा, फ़िरोज़ाबाद

अब्बाजान.... (एक तूफ़ान)

सालिम शुजा अन्सारी साहब से मेरी शनासाई एक तवील अर्से से है जब वो एक आर्टिस्ट के तौर पर अपने फ़न के उरूज पर थे। मैं भी अहले शहर की तरह उन्हें इसी फ़न के सबब जानता था मगर पिछले 10 सालों से ये नाम शायिरी के हवाले से शहर की अदबी शाहराहों पर गूँजने लगा तो मेरा ध्यान इस तरफ़ माइल हुआ, हर अदबी ज़ौक़ रखने वाला 'सालिम' की शायिरी को इज़्ज़त की निगाह से देखता था मौसूफ़ की शयिराना सलाहियतों ने वो मुक़ाम हासिल किया जो हमारे इस सिनअती शहर में किसी भी शख़्स को मयस्सर नहीं हुआ मौजूदा वक़्त के असातिज़ा भी ' सालिम' साहिब की शायिरी से न सिर्फ़ मुतास्सिर रहे बल्कि उनमें मुसतक़बिल के इमकानात भी तलाश करते रहे, मेरे अन्दर सालिम साहब से मुलाक़ात की ख़्वाहिश बढ़ गई और एक दिन मैं उनसे मिलने उनके दौलत ख़ाने पर हाज़िर हुआ तो दौराने गुफ़्तगू मैंने पाया कि 'सालिम' साहब मेरे गुमान से भी सिवा पुख़्तागो और हाज़िर जवाब शायिर हैं,उनका कलाम मुल्क व बैरूनी मुमालिक के मुसतनिद रसाईल में पाबन्दी से शायअ हो रहा है और वो बड़े ज़ोर शोर के साथ अदबी सरगरमियों में मसरूफ़ हैं, मैंने सालिम साहिब को 'इन्टरनेट' पर आने का न्यौता दिया जिसे उन्होंने बड़ी ना नकुर के साथ क़ुबूल कर लिया,मुझे ये शरफ़ हासिल हुआ कि मैंनें ही सबसे पहले सालिम शुजा अन्सारी साहब को इन्टरनेट की अदबी दुनिया से रूशनास कराया, इन्टरनेट 'फ़ेसबुक'पर मेरा एक कलब जो शायिरी के हवाले से सबसे ज़्यादा मक़बूल है सालिम शुजा से सरफ़राज़ हुआ, देखते ही देखते सालिम साहब इन्टरनेट के सबसे मुअतबर शोअरा की फ़ेहरिस्त में शामिल हो गए और अपनी शायिरी के ज़रिऐ आला मुक़ाम पर फ़ाइज़ हो गये, तभी उनके अन्दर एक मज़ाहिया किरदार ने जो यक़ीनन उनमें पहले से रहा होगा क़लम उठा लिया जिसका नाम उन्होंने 'अब्बाजान' रखा, अब्बाजान की मज़ाहिया और तन्ज़िया ग़ज़लों, नज़्मों ने जैसे एक तहलका ही मचा दिया, हर ख़ासो आम अब्बाजान के कलाम को पाबन्दी से पढ़ने लगा और अब्बाजान का कलाम सबसे ज़्यादा रेट होने लगा,सूरते हाल ये रही कि अब्बाजान का किसी कलब में मौजूद होना कलब की काम्याबी की ज़मानत बन गया।अब्बाजान का किरदार गढ़ते वक़्त शायद सालिम साहब को भी ये ख़बर न थी कि ये फ़र्ज़ी किरदार आज इन्टरनेट की अदबी दुनिया का तन्हा ऐसा किरदार बन जाएगा जिसकी ज़रूरत फ़ेसबुक के हर कलब को शिद्दत से महसूस होगी,और सालिम साहब की अपनी असली शिनाख़्त भी धुँधली पड़ जाऐगी।

सालिम शुजाअ अन्सारी

फ़ेसबुक के

'अब्बाजान'

FACEBOOK KE

ABBAJAAN

फ़हरिस्त ए मज़ामीन

01.	**अब्बाजान–मुअजज़ा जो हुआ**	मयंक अवस्थी– कानपुर	09
02.	**खुल गई आख़िर हक़ीक़त**	संजय मिश्रा 'शौक़'–लखनऊ	15
03.	**अब्बाजान–एक ख़ाका**	अब्दुल वहाब 'सुख़न'–सऊदी अरब	18
04.	**अब्बाजान–दोहरा किरदार**	डा. मुहम्मद आज़म–भोपाल	22
05.	**अब्बाजान–यगाना ए रोज़गार**	मसऊद हस्सास–सऊदी अरब	25
06	**अब्बाजान–मेरी नज़र में**	डा.आदिक भारती–सोनीपत	27
07.	**अब्बाजान–पर्दाफ़ाश**	हृदयेश शुक्ल 'हुमा'कानपुरी–भोपाल	29
08.	**अब्बाजान–मेरे दोस्त**	असलम 'अदीब'–फ़िरोज़ाबाद	33
09.	**अब्बाजान–मील का पत्थर**	अमीम जाफ़री–कानपुर	35
10.	**Abbajaan**–My Bhaijaan	मीनू 'राहत' मन्सूरी–मन्दसौर	37
11.	**अब्बाजान–एक तूफ़ान**	हादी जावेद–फ़िरोज़ाबाद	39

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

इब्तिदा नामे ख़ुदा से जो अज़ीमुलशान है
है निहायत रहम वाला और बड़ा रहमान है

मन्ज़ूम सूरह ए फ़ातिहा

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝١

सारी तअरीफ़ें उसी रब की, जो ला महदूद है
बिलयक़ीं सारे जहानों का वही मअबूद है

الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝٢ مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ۝٣

जो निहायत रहम वाला है बड़ा रहमान है
हश्र के दिन का वही मालिक,वही यज़दान है

اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَاِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ ۝٤

हम फ़क़त करते हैं तेरी ही इबादत ऐ ख़ुदा
और फ़क़त तुझसे ही करते हैं मदद की इल्तिजा

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۝٥ صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ۝٦

ऐ ख़ुदाए पाक हम को सीधे रस्ते पर चला
रास्ता उन सबका, जिन पर तूने की महरो अता

غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ ۝٧

ने कि वो जो मूजिबे ग़ैज़ो ग़ज़ब अल्लाह थे
ने कि उन लोगों के रस्ते पर, कि जो गुमराह थे

प्रकाश पुंज

आया था
आकाश मार्ग से...एक पुंज प्रकाश स्रोत का
और जिसने प्रकाश तेज से
धरती के हर अँधियारे को
मुक्ति दी, उजियार दिया...
भक्ति का आधार दिया...
जीवन का आकार दिया...
सृष्टि को उद्धार दिया !
वाहक था संदेशों का,
पालक था आदेशों का
कौन था वह ?...जो मरुस्थल में
पानी की बौछार बना
धरती पर अवतार बना
प्रेयस था उस प्रेमी का,जिसने सृष्टि की रचना की
जिसकी रचना के कारण ही मानव का निर्माण हुआ
सब में जो स्वयं प्राण हुआ

है कौन अब्बा?

सभी को शक है, है कौन अब्बा, है कोई फ़र्ज़ी ये नाम साहिब
क्या फ़िक्र मुस्बत नहीं है मेरी,नहीं है पुख़्ता कलाम साहिब
तुम्हारे जैसा हूँ मैं भी इन्साँ,मगर हूँ सबसे क़दीम शायिर
कलब के सब मुक़्तदी समझ लें,हूँ सबका मैं ही इमाम साहिब
हो ज़ोर क्यूँकर किसी का मुझ पर,बताओ क्यूँकर सुनूँ किसी की
ख़ुद अपनी मर्ज़ी का मैं हूँ मालिक, नहीं किसी का ग़ुलाम साहिब
सता रहे हैं ये एडमिन भी ,अजीब बहरों में तरह देकर
ज़लील करने की साज़िशें हैं,लिया है ये इन्तिक़ाम साहिब
वो हो इलैक्शन विधायकी का,या फिर सलैक्शन हो इक ग़ज़ल का
बनेगा फ़ातह बस एक इन्साँ,बनेंगे अहमक़ अवाम साहिब
बताओ किसका है फ़ैज़ इस में,मुफ़ीद किसके लिए ये सब
ग़ज़ल तो उस्ताद ने लिखी है, हुआ है चेले का नाम साहिब
मुझे भी ऑफ़र कई मिले थे,ग़ज़ल हमारी भी अब्बा लिख दो
कहो तो नज़राना पेश कर दें,कहो तो कुछ देदें दाम साहिब
ग़ज़ल है इसकी तो हज़्ल उसकी, करूँ भी इस्लाहें मैं कहाँ तक
तमाम दिन का ये मशग़ला है, नहीं है और कोई काम साहिब

कि देके जिसने ग़ज़ल का मिस्रा,किया ज़ईफ़ी में मुझको बेकल
तो लम्बी लम्बी ग़ज़ल मैं कह कर,करूँगा जीना हराम साहिब
अगर उठाई मिरी ग़ज़ल की,तवालतों पर किसी ने उँगली
करूँगा ऐसे कलब को उस दिन, मैं दूर ही से सलाम साहिब
सुराग़ 'अब्बा' का ढूँडते हैं,तमाम जासूस इस कलब के
पता कहीं का बताया मैंने,कहीं है मेरा क़याम साहिब

हमारे हिस्से की गरदिशों का, कभी तो हो इख़्तिताम साहिब
कहीं पे होती है सुब्ह अब भी,कहीं पे होती है शाम साहिब
कहाँ से लाऐं कहो क़नाअत,सहें भी रंज ओ अलम कहाँ तक
जो ख़त्म रूदाद ए ज़िन्दगी हो,तो हो ये क़िस्सा तमाम साहिब
हुई है बेज़ार हर समाअत, ज़बाँ पे भी क़ुफ़्ल ए मुस्तक़िल है
कोई नहीं कहने सुनने वाला, करें भी किस से कलाम साहिब
नहीं है बन्दिश दिमाग़ पर भी,नहीं तख़य्युल पे जब्र कोई
जो ला शऊरी है कार फ़रमा, करे शऊर अपना काम साहिब
वो जिसको चाहे उसी को देगा, शऊर ए शअर ओ सुख़न का तुहफ़ा
उसी की महर ओ रज़ा पे है सब,उसी का है ये निज़ाम साहिब
बचेगा कोई नहीं जहाँ में,गिरफ़्त ए दस्त ए क़ज़ा से 'अब्बा'
दबोच ही लेगी मौत इक दिन,मरेंगे सब ख़ास ओ आम साहिब

तआरुफ़

लोग कहते हैं अज़ीमुलशान हूँ
जबकि मैं अदना सा इक इन्सान हूँ
चश्म ए बीना का हूँ दअवेदार मैं
अपनी हस्ती से मगर अन्जान हूँ
है करम मुझ पर मिरे अल्लाह का
बा हया,बा ज़र्फ़, बा ईमान हूँ
किस क़दर उस ने नवाज़ा है मुझे
बख़शिशों पर उसकी मैं हैरान हूँ
हैं मिरे आक़ा मुहम्मद मुस्तफ़ा
और मैं इक बन्दा ए यज़दान हूँ
मज़हबे इस्लाम है मज़हब मिरा
अहले ईमाँ, हामी ए क़ुरआन हूँ
हूँ यहाँ महदूद मुद्दत के लिए
कौन जाने कितने दिन मेहमान हूँ

आप जो चाहें,समझ लें वो मुझे
मैं समझता हूँ कि मैं नादान हूँ
हूँ कभी मैं पैकरे संजीदगी
और कभी तफ़रीह का सामान हूँ
आज भी कहता हूँ ख़ुद को मुब्तदी
यूँ तो साहिब, साहिबे दीवान हूँ
दुश्मनों के बीच हूँ मुश्किल कोई
दोस्तों के दरमियाँ आसान हूँ
हूँ अज़ीज़ों के लिए मैं, देवता
और रक़ीबों के लिए शैतान हूँ
दे.. न मुझको कोई गीदड़ भभकियाँ
मैं सरापा शेरे हिन्दुस्तान हूँ
चेला हूँ उस्ताद 'एम.ए.ख़ार' का
'जानशीने ख़ार' बा ऐलान हूँ
यूँ तो सरकारी मुअल्लिम हूँ मगर
दर्सगाहे इल्म का दरबान हूँ
लिख रहा हूँ शेअर दो दो नाम से
एक हूँ, पर दोहरी पहचान हूँ
आज चेहरे से उठाता हूँ नक़ाब
मैं ही 'सालिम', मैं ही 'अब्बाजान' हूँ

ग़ज़ल

तुहफ़ा अगर नहीं है तो ख़ाली अदब से क्या
बेटा 'वहाब' लाऐ सऊदी अरब से क्या

इक इल्तिजा यही थी कि सुरमा तो लाओगे
हम को मताअे नादिरो रख़्ते अजब से क्या

पूरे किऐ हैं आते ही सबके मुतालिबे
हम ही थे ग़ैर तुमको हमारी तलब से क्या

पूछा न एक बार भी कैसे मिज़ाज हैं
तुमको हमारी शामो सहर,रोज़ो शब से क्या

आते ही हिन्द पहले बरेली को जा लगे
लगता नहीं है डर मिरे ग़ैज़ो ग़ज़ब से क्या

दुनिया समझ रही थी, हमारे अज़ीज़ हो
तुम ही कहो, कहेंगें भला, हम भी सब से क्या

फ़ोटो में भी खड़े हो तो इक 'आदमी' के साथ
तुमको किसी हसीन के रुख़्सार ओ लब से क्या

तुम अपने वालिदैन के ख़ल्फ़ उल रशीद हो
तुमको पराई आग पराई लहब से क्या

बेटा कहा है तुमको तो मानेंगे उम्र भर
माँगेंगे इक दुआ के सिवा और रब से क्या

बेशक तअल्लुक़ात की बुनियाद है ख़ुलूस
'अब्बा' तुम्हारी ज़ात से नामो नसब से क्या

(जनाब अब्दुल वहाब साहब की हिन्दुस्तान आमद पर)

ग़ज़ल

गुण्डे हमारे शहर के जितने थे मर गए
हम यूँ बचे, कि वक़्त से पहले सुधर गए

पैदा हुए ज़मी पे कुछ ऐसे हराम ख़ोर
लूटा खसोटा,खाया पिया और मर गए

ईमानदार लोगों का अन्जाम था यही
महसूस ये हुआ 'इधर आए उधर गए'

क़दमों पे उनके ख़ुद बख़ुद इन्साफ़ गिर पड़ा
मुन्सिफ़ की जेब नोटों से जो लोग भर गए

लगता यही है वो सभी आवारा लोग थे
आए जो घर से, लौट के वापस न घर गए

मजबूरियों का मुझसे जो पूछा गया सबब
ऐसा लगा कि जिस्म के कपड़े उतर गए

लफ़्ज़ों से खेलना कोई आसाँ नहीं जनाब
इस शायिरी में कितनों के ज़ेरो ज़बर गए

शागिर्द 'अब्बा' तेरे तिरी ले उड़े बयाज़
चेले ही कान अपने गुरू के कतर गए

अरूज़ दाँ

है शहर में मिरे भी इक ऐसा हरीफ़ ए जाँ
कुछ जानता नहीं है,मगर है अरूज़ दाँ
आजिज़ हैं लोग उसके ज़बानो बयान से
अहले ज़बान कहते हैं सब उसको,बद ज़बाँ
क़दमों तले ज़मीन नहीं एक इंच भी
फिर भी उठाए फिरता है सर पर वो आसमाँ
ग़ज़लें किसी की हों, कभी भाती नहीं उसे
अपने हर एक शेअर को कहता है जाविदाँ
इसकी मुख़ालिफ़त,कभी उसकी मुख़ालिफ़त
हैं लोग उस से और वो लोगों से बदगुमाँ
ख़ामी तलाश करता है सबके कलाम में
मुँह मारता ही रहता है हरदम यहाँ-वहाँ
जो कह रहा है समझो उसे हर्फ़े आख़िरी
महफ़ूज़ है वो शख़्स जो करता है, हाँ में हाँ

बेशक है उसके ज़ाहिरो बातिन में इक तज़ाद
लब पर ख़ुलूस और हसद दिल में है निहाँ
तक़्तीअ पहले शेअर की करता है बदमिज़ाज
कोई ग़ज़ल सुनाओ तो करता है चूँ चराँ
देता नहीं है दाद बिना नाप तौल कर
करता है यूँ भी हुस्ने तग़ज़्ज़ुल का वो ज़ियाँ
इसमें है हश्व, उसमें है ईता, यहाँ सुकूत
इस जा हज़फ़,तो उस जा ज़िहाफ़े फ़लाँ फ़लाँ
इल्लत यहाँ गिरी,तो वहाँ हर्फ़ गिर गया
आ ही नहीं सकेगा फ़लाँ क़ाफ़िया यहाँ
मफ़ऊल, फ़ाइलात, मुफ़ाईल, फ़ाइलुन
इस बहर में है रुक्न भी फ़ेलान इक मियाँ
औसाफ़ उस के मैंने क़लम बन्द कर दिए
ज़ाहिर है नाम कर नहीं सकता यहाँ अयाँ
जो बात मुझको कहना थी उस तक पहुँच गई
फिर भी है एक राज़ मिरे उसके दरमियाँ
वो भी समझ रहा है ,ये उसका ही ज़िक्र है
जल भुन रहा है, भींच रहा है वो मुठ्ठियाँ
'अब्बा' समझ रहा है,कि तुम भी समझ गए
इतना भी बेवक़ूफ़ नहीं है कोई यहाँ

फ़न पारे

01. मन्ज़ूम सूरह ए फ़ातिहा 41
02. प्रकाश पुंज 42
03. रुबाई 56
04. रुबाई 58
05. रुबाई 69
06. रुबाई 72
07. रुबाई 78
08. रुबाई 83
09. रुबाई 88
10. क़तअह 95
11. दोहे ....(नेतांजली) 99
12. कुण्डलियाँ 101
13. रुबाई 106
14. रुबाई 108
15. रुबाई 125
16. क़तअह 128
17. क़तअह 130
18. रुबाई 134
19. रुबाई 136
20. क़तअह 137

नज़्में

01. तआरुफ 45
02. अरूज़ दाँ 49
03. गुज़ारिश 53
04. आम ए ख़ास 55
05. जवाबी नज़्म 57
06. मिन्नत 59
07. वसीयत नामा 67
08. खुजली 71
09. ग़लत फ़हमी 77
10. फ़रमाइश 79
11. आख़िरी तख़लीक़ 81
12. अकबर और बीरबल 89
13. अय्यार गीदड़ 93
14. मुर्ग़ और भेड़िया 97
15. रुख़सत ए रमजाँ 109
16. पीर बाबा 113
17. शायिर कलब 117
18. गुस्सा 135

ग़ज़ल

रख यक़ीं है मौत का लम्हा अटल
क्या पता किस वक़्त आ जाए अजल
घट रही है लम्हा लम्हा ज़िन्दगी
धीरे धीरे उम्र जाएगी निकल
दिल न छोटा कर मुसीबत में कभी
हो सके तो मुश्किलों का ढूँड हल
फ़ैसला तब्दील भी हो जाएगा
जो नज़रिया है,उसे पहले बदल
बा अमल के पास है तन्हा जवाज़
सौ बहाने ढूँडता है बे अमल
फ़ितरते इन्साँ बदलना है मुहाल
जल के भी जाता नहीं रस्सी का बल
फ़िक्रे 'मुस्तक़बिल' में सब बे 'हाल' हैं
आदमी के 'आज' पर हावी हैं 'कल'
ठोकरें लगती हैं हर इक शख़्स को
वो सयाना है जो जाता है संभल
देर है, अन्धेर तो हरगिज़ नहीं
नेकिया का एक दिन मिलता है फल

ग़ज़ल

ग़ैर की दौलत से तू हरगिज़ न जल
बेटा अपनी आरज़ूओं को कुचल
देख कर बीवी पराई मत फिसल
रख प्रेशर तू ब्लड का नॉर्मल
फ़स्ल कब उगती है बंजर खेत में
क्यूँ चलाए जा रहे हो इस पे हल
अब नहीं औलाद का भी ऐतबार
क्या पता किस मोड़ पर कर जाए छल
हम सफ़र है तो सफ़र की लाज रख
राह में कुछ दूर तक तो साथ चल
बस दिले मुफ़्लिस में पाओगे वफ़ा
सिर्फ़ कीचड़ में ही खिलता है कंवल
हाथ में इक दूसरे के है शराब
कौन डाले किस के मुँह में गंगाजल
बहर कोई हो, ख़ुदा के फ़ज़्ल से
दस मिनट में कह ही दूँगा मैं ग़ज़ल
'फ़ेसबुक' क्या है? मिरा दरबार है
'अब्बा' अकबर और 'सालिम' बीरबल

गुज़ारिश

है गुज़ारिश सब से अब्बाजान की
ढूंढो इक बेवा कोई पहचान की
शफ़क़ते मादर से सब महरुम हैं
है ज़रुरत सबको अम्मीजान की
अब तवाज़्अ के सभी दर बन्द हैं
अब नहीं ख़ातिर कोई मेहमान की
लुट गया जब ज़िन्दगी का कारवाँ
फ़िक्र क्या तब नफ़्अ और नुक़्सान की
वक़्त है पढ़वा दो अब्बा का निकाह
रह नज़र आती है कब्रिस्तान की
आदमी की इक यही तस्कीन है
एक मजबूरी है यह इन्सान की
सब्र का दामन न छुड़वाए खुदा
डोर भी साबित रहे ईमान की
हर किसी शै से तकल्लुफ़ बरतरफ़
बात इसमें कुछ नहीं एहसान की
जामे शरबत हो कोई बाद अज़ निकाह
हर बराती को गिलौरी पान की

माहज़र में मुर्ग का हो क़ोरमा
है ज़रुरत नर्म ओ ताज़ा नान की
बाख़ुदा इक सख़्त लानत है जहेज़
कार देते हैं तो दें जापान की
सूट अरमानी का, शू वुडलैण्ड का
हो घड़ी तुहफ़े में ताईवान की
मिस्र के पर्दे,ग़लीचे रोम के
इक अदद क़ालीन हो ईरान की
हों किलो भर के तलाई ज़ेवरात
इक अँगूठी हो किसी सुल्तान की
सीम के बर्तन हों कुछ सौग़ात में
आबरू ताहम हो दस्तरख़्वान की
माल जो है सब है अम्मीजान का
हमको कुछ हाजत नहीं सामान की
हो मुलव्विस ऐश में जब ज़ुर्रियत
क्या ज़रुरत होगी' अब्बाजान ' की

नाक़िद

हंस चुन चुन के ले गये मोती
मुर्ग़ियाँ बीनती रहीं कूड़ा

आम ए ख़ास

सब्ज़ रंगी,सफ़ेद और पीले
तुन्दो ताज़ा ,गुदाज़ चोंचीले
है दसहरी तो कोई है लंगड़ा
एक बम्बइय्या, एक है चौंसा
कोई क़लमी तो कोई है देसी
बहतरीं है मलीह आबादी
खुश्बुओं में अजब लताफ़त है
इसकी रग रग में इक हिलावत है
आम की बात है अलग सब से
आम की ज़ात है अलग सब से
रु ब रु हर समर ख़मीदा है
आम इस दरजा बरगुज़ीदा है
आम से कौन जी चुराता है
आम खाने में लुत्फ़ आता है
आम ग़ालिब को खूब भाते थे
क़र्ज़ ले ले के आम खाते थे
लुत्फ़े बोसो कनार आता है
आम पर सबको प्यार आता है

पेश आते नहीं तकल्लुफ़ से
आम खाते नहीं तकल्लुफ़ से
पहले कुछ पिलपिलाइये इसको
बाद में मुँह लगाइये इसको
उँगलियों से दबाइये इसको
आख़िरश चूस जाइये इसको
बारहा मुँह में डालिये गुठली
डालिये और निकालिये गुठली
करते रहिये अमल ये बेहूदा
जब तक आता रहे नज़र गूदा
रखिये सब अपने काम एक तरफ़
इक तरफ आप आम एक तरफ़

(जनाब असलम अदीब साहब की एक 'आम' दावत पर)

रुबाई

सब्ज़ी है कि बोटी है परेशाँ क्यूँ है
ऐ शायर ए बदबख़्त पशेमाँ क्यूँ है
करना है तुझे भीक के टुकड़ो पे गुज़र
फिर लब पे तिरे हिन्दू, मुसलमाँ क्यूँ है

जवाबी नज़्म

शुक्रिया सद शुक्रिया ए दोस्त 'आदिक भारती'
आप ने मन्सूब मेरे नाम से जो नज़्म की
आपका मुझ पर है गोया ये भी एहसाने अज़ीम
जो हुई मरकूज़ मुझ पर आपकी अक़्ले सलीम
एक शायिर का किया है जिस तरह से एहतराम
देखना इक दिन ख़ुदा ही लेगा इसका इन्तक़ाम
आप तो शायिर समझते थे मुझे कल 'टॉप' का
किस लिए बरहम हैं, मैंने क्या बिगाड़ा आप का
कल तो मुँह भर भर के मुझसे कह रहे थे अब्बाजान
कर रहे हैं आज किस मुँह से मिरा ऐसा बखान
कौन सी साज़िश है ये सब, कौन सा ये खेल है
आपका इन नौजवाँ लौंडों से कैसा मेल है
आपने क्यूँ कर लिया बेहूदगी से इत्तिफ़ाक़
क्यूँ उड़ाना चाहते हैं आप 'अब्बा' का मज़ाक़
कुछ न सोचा...ज़हर के यूँ तीर बरसाते हुए
दिल न लरज़ा...एक बूढ़े पर सितम ढाते हुए
तीर तो छोड़ा है साहब ख़ूब अब्बाजान पर
हाथ फेरा है कभी अपने सरे वीरान पर

आपकी नज़रें पड़ीं बस मेरे झबरे बालों पर
क्या कभी डालीं है नज़रें अपने पिचके गालों पर
चेहरा ए अनवर कभी तो आइने में देखते
हद्दे पेशानी कहाँ तक है कभी तो सोचते
ख़ूबरुई आपकी.. तस्वीर से भी है अयाँ
आपके सर पर तो बालों का नहीं नामो निशाँ
उड़ गए गेसू या फिर बेगम से खटपट हो गई
कुछ तो कहिए खोपड़ी कैसे सफ़ाचट हो गई
आप ख़ुद को क्या समझते हैं, रितिक रोशन हैं आप
आधे अनुपम खेर तो आधे अमित बच्चन हैं आप

(डा. आदिक भारती जी की नज़्म के जवाब में)

रुबाई

दिन रात उठाता है ख़िसारा शायिर
रोता है सिसकता है बिचारा शायिर
डर है मुझे 'अब्बा' जो यही हाल रहा
हो जाये न अल्लाह को प्यारा शायिर

मिन्नत

रुठे बच्चों को मनाने के लिए
नज़्म हाज़िर है ज़माने के लिए
बेरुख़ी से रुए रोशन मोड़ कर
चल दिए शायिर कलब को छोड़ कर
बोलिऐ मसऊद,आदिक और वहाब
क्या तरीक़ा ये मुनासिब है जनाब
बात अगर कुछ थी तो मुझसे बोलते
कुछ न हो पाता तो फिर पर तोलते
मुझसे कहते आप अगर नाराज़ थे
आप सब हज़रात दिल फ़ैय्याज़ थे
गौहरे अल्मास हैं, नायाब हैं
आप सब तो शायिरे हस्सास हैं
दूरियाँ कैसे दिलों में आ गयीं
नफ़रते क्यूँ चाहतों को खा गयीं
क्यूँ हुआ आपस में आख़िर इन्तिशार
कर दिया किसने वफ़ा को दाग़दार
दिल किसी का यूँ दुखाता है कोई
रूठ कर अपनों से जाता है कोई

आप तीनों पर था दिल को ऐतबार
आप ही ने कर दिया बे इख़्तियार
ये तो सब चलता ही रहता है यहाँ
अपनों से होते नहीं हैं बदगुमाँ
सब से मिलता है कहाँ सबका मिज़ाज
एक सा होता नहीं कोई समाज
बात जो कहता हूँ सुन लें ग़ौर से
दिल मिला लें अब किसी भी तौर से
हुक्म समझें या गुज़ारिश जान लें
बस फ़टाफ़ट मेरा कहना मान लें
भूल का शिकवे गले लग जाइए
लौटकर शायर कलब में आइए
चलके आऊँगा किसी भी हाल में
ख़ुद करूँगा बढ़के इस्तक़बाल मैं
आपकी आमद से दिल भर जाएगा
वरना 'अब्बा' हिज्र में मर जाएगा
नज़्म पढ़कर अपने इस ग़मख़्वार की
सब्त कीजे मुहर अपने प्यार की
यौमे पैदाइश पे तुहफ़ा दें मुझे
आके सीने से लिपट जाऐं मिरे

ग़ज़लें

01. सभी को शक है, है कौन अब्बा.... 43
02. तुहफ़ा अगर नहीं है तो ख़ाली.... 47
03. गुण्डे हमारे शहर के जितने थे.... 48
04. रख यकीं है मौत का लम्हा अटल 51
05. ग़ैर की दौलत से तू हरगिज़..... 52
06. मरता है तो मर जाए कोई..... 61
07. शायिरों की करते हैं इमदाद हम. 62
08. करता हूँ सिर्फ़ ज़हने गिलाज़त.. 63
09. हँसने न देंगी संजय तुम्हें..... 64
10. इस नए दौर का अन्दाज़..... 65
11. मुझे बूढ़ा बताया जा रहा है..... 66
12. कामयाबी के सभी हीले..... 70
13. इक दो नहीं हज़ारों..... 73
14. जल भुन गया हूँ तेरी..... 74
15. साँप का बिल है..... 75
16. जिस्मे बेगम पे चढ़ा है..... 76
17. आदमी बिन ये स्त्री..... 84
18. कब से लगा हुआ हूँ..... 85
19. हो गई है ख़त्म परदारों की..... 86
20. देखकर मेरी ग़ज़ल..... 87
21. बस कि लाज़िम था..... 88
22. मुअतदिल होगी ज़माने की..... 92
23. यूँ दम ब दम मिरी आँखों में..... 96
24. जब परिस्थिति.....(हिन्दी).... 100
25. हो नहीं पाते इकट्ठे..... 102
26. मुख़्तसिर सी उम्र के.....103
27. कैसा स्वर.....(हिन्दी).....104
28. क़दम क़दम पे मिलेंगे.....105
29. वहम है या कोई गुमान है.....107
30. हो भी जाओ तुम इकट्ठे..... 111
31. सबकी करते हैं ख़ैरख़्वाही..... 116
32. कोई भी मुझसे ज़ियादा.....120
33. जिसका जैसा चरित्र...(हिन्दी)... 121
34. माता–पिता को.....(हिन्दी)... 122
35. हर बज़्म में है मेरा..... 123
36. साबित हुए हैं वक़्त पे..... 124
37. रक्खोगे मित्रों से.....(हिन्दी).. 125
38. रिश्ते निबाहता है मिरा..... 126
39. अब इस से पहले कि करदे..... 127
40. जल रहा था जो..... 129
41. है तअस्सुब भरी..... 130
42. घर में मिरे पत्थर नहीं..... 131
43. जानते बूझते तूफ़ान..... 132
44. हैं सहूलत के इन्तिज़ाम..... 133
45. शेर को लगती है जैसे..... 137
46. बेसबब भागती है खूँटे से..... 138
47. है रंजो ग़म का कोई..... 139
48. मैं जीना चाहता हूँ.....140

ग़ज़ल

मरता है तो मर जाए कोई मेरी बला से
मैं बाज़ न आऊँगा मगर अपनी अदा से
तुम पेश युँही करते रहो बेतुकी ग़ज़लें
मुझको भी चलाना है यहाँ 'फ़न' के गड़ासे
कितने ही गवैय्यों को बनाया है सुख़नवर
हैं साहिब ए दीवान 'कई' मेरी दुआ से
जलते हैं जहाँ दीप, वहाँ बल्ब लगा दो
बुझने का कोई ख़ौफ़ न डर तेज़ हवा से
उलझे हैं कई जिस्म मिरे बूढ़े बदन से
लिपटी हैं कई रूहें मिरी चाक क़बा से
फ़ितरत का इलाज आज भी मुमकिन नहीं कोई
पैदा नहीं होता है शऊर अब भी दवा से
दुनिया से किसी हाल में वो डर नहीं सकता
'अब्बा' की तरह जो कोई डरता है ख़ुदा से

ग़ज़ल

शायरों की करते हैं इमदाद हम
इस लिए हैं आज तक बरबाद हम
मीर ओ ग़ालिब, ज़ौक़ की औलाद हम
हैं कई पीढ़ी से शायिर ज़ाद हम
मत चलाओ तन्ज़ के नश्तर मियाँ
तुम अगर क़ातिल हो, तो जल्लाद हम
मान लेते हैं कि तुम उस्ताद हो
हैं मगर उस्तादों के उस्ताद हम
हम को फ़न्ने शायिरी पर है उबूर
कर चुके बहरें कई ईजाद हम
आज भी रखते हैं अज़्मे आहनी
जिस्म से माना नहीं फ़ौलाद हम
हम भी इक लैला के मजनूँ थे कभी
थे कभी इक शीरीं के फ़रहाद हम
पहलवाँ, गुण्डे, मवाली, माफ़िया
रख चुके शागिर्द ला तअदाद हम
आख़िरत की फ़िक्र अब रहने लगी
फ़िक्र ए दुनिया से हुए आज़ाद हम
ज़ोर भी है दस्ते 'अब्बाजान' में
ले ही लेंगे तुम से जबरन दाद हम

ग़ज़ल

करता हूँ सिर्फ़ ज़हने ग़िलाज़त पे ऐतराज़
मुझको न आदमी पे, न औरत पे ऐतराज़
फ़नकार हो तो नर्म रवैय्या रखा करो
बेजा करो न जिद्दतो नुदरत पे ऐतराज़
तुम जानते नहीं हो ख़ुदा साथ है मिरे
नाहक़ है मेरी फ़हमो फ़िरासत पे ऐतराज़
अबजद के चार हर्फ़ भी जो जानता नहीं
उस शख़्स को है मेरी लियाक़त पे ऐतराज़
दो चार शेर कह के ही जो हाँपने लगें
करते हैं वो ग़ज़ल की तवालत पे ऐतराज़
मज़मूँ चुरा रहे हैं ग़ज़ल से वो ग़ैर की
फिर भी जता रहे हैं ख़यानत पे ऐतराज़
ख़ुद अपने क़द का जायज़ा लेते नहीं मगर
करते हैं ग़ैर की क़दो क़ामत पे ऐतराज़
आते नहीं नज़र में मुहासिन कलाम के
करते हैं बस उयूबो कसाफ़त पे ऐतराज़
तअमीर के बजाए जो तख़रीब साज़ हो
है मुझको उस अरूज़ो बलाग़त पे ऐतराज़

है उनकी नफ़रतों पे तो हर शख़्स मुतमइन
करते हैं लोग मेरी मुहब्बत पे ऐतराज़
'अब्बा' जो मुअतरिज़ हैं तिरी ज़ाते ख़ास पर
दानिस्ता कर रहे हैं हक़ीक़त पे ऐतराज़

ग़ज़ल

हँसने न देंगी 'संजय' तुम्हें वज़अ दारियाँ
कब तक करोगे तर्ज़े लताफ़त पे ऐतराज़
'आदिक' हैं मेरे रेशमी बालों पे मुअतरिज़
'मसऊद' को भी है मिरी सूरत पे ऐतराज़
देते हैं जलके दाद मिरी नज़्म पर 'वहाब'
'साजिद' को है ग़ज़ल की फ़साहत पे ऐतराज़
जलते हैं तन दुरुस्ती से 'मसऊद जाफ़री'
करते हैं 'तोपची' मिरी सिह्हत पे ऐतराज़
शायिर कलब से हो गए ग़ायब 'मयंक' भी
शायद उन्हें था 'सालिम ओ सरवत' पे ऐतराज़
'लेडीज़' पास हो तो क़बाहत नहीं कोई
'हादी' को आदमी की है सुहबत पे ऐतराज़
बेटा 'अमीम' तुम मिरी सुनते नहीं हो अब
करने लगे हो तुम भी मुरव्वत पे ऐतराज़

आती नहीं हैं बज़्म में अब 'अवनी अस्मिता'
करती हैं वो बड़ों की नसीहत पे ऐतराज़
मैसेज लिख के मुझसे 'सिया' ने ये कल कहा
'मीनू' को भी 'हुमा' की है नीयत पे ऐतराज़
देखो 'मलिक नवेद' ने फिर नज़्म ठोंक दी
होता है सबको उनकी इसी लत पे ऐतराज़
नरगे़ में आ ही जाएंगे 'असलम अदीब' भी
करके तो देखें 'अब्बा' की जुरअत पे ऐतराज़

ग़ज़ल

इस नए दौर का अन्दाज़ नया है बेटा
कल जो मअयूब था वो आज रवा है बेटा
हुस्ने अख़्लाक़ में सबके जो कमी आई है
कुछ नहीं ये तो ज़माने की हवा है बेटा
वो समझता है उसे मौत नहीं आएगी
उसका ये वहम है, ये उसकी ख़ता है बेटा
तुमको पस्ती में गिरा देगी बलन्दी की हवस
है यही क़ौल बुज़ुर्गों का.. पता है बेटा
तुम हो औलाद तो 'अब्बा' को अमीर अपना चुनो
हक़ उसी का है, वही घर में बड़ा है बेटा

ग़ज़ल

मुझे बूढ़ा बताया जा रहा है
ये मुझ पर जुल्म ढाया जा रहा है
यहाँ लाया गया दिलबस्तगी को
यहाँ भी दिल दुखाया जा रहा है
नहीं है दाँत मुँह में इक भी साबित
मगर लोहा चबाया जा रहा है
बहुत नायाब है इक मुस्कुराहट
तुम्हें रो कर हँसाया जा रहा है
पड़ी हैं बन्द दिल की सब दुकानें
युँही बेजा किराया जा रहा है
हमें 'चालीस' में जो फ़न न आया
हुनर वो 'दस' में आया जा रहा है
बरस दस कम हैं मेरे सौ बरस में
मुझे क्यूँ कर जगाया जा रहा है
बड़ी हैरत है कि इस उम्र में भी
मुझे 'अब्बा' बनाया जा रहा है

वसीयत नामा

वक़्त की अब यही नज़ाकत है
बाख़ुदा ख़दशा ए हलाकत है
घर के हालात अब नहीं अच्छे
मार डालें न बाप को बच्चे
मेरी औलाद मुझसे है बरहम
क्या करूँ जब ख़िलाफ़ है मौसम
इस ज़ईफ़ी में सब्र कैसे करूँ
अपने बच्चों पे जब्र कैसे करूँ
मेरे बच्चो मिरी नसीहत है
पेश तुमको मिरी वसीयत है
फ़र्ज़ अपना 'वहाब' अदा करना
कर्ज़ मेरा शिताब अदा करना
दें किराया मकान का 'हादी'
मेरी दौलत जो खा गए आधी
दाँत का सेट 'जाफ़री' के लिए
और कंघा है 'भारती' के लिए
कुरता 'सर्वत जमाल' को देना
मेरी लुंगी 'कमाल' को देना

दो मिरा पानदान 'आज़म' को
थूकदान 'आफ़ताब आलम' को
है क़लम एक 'अस्मिता' के लिए
और क़लमदान है 'सिया' के लिए
एक चश्मा है सो 'हुमा' को मिले
और टोपी है 'शौक़' जी के लिए
जो जुराबें हैं देना 'आसिम' को
और जूते, जनाबे 'सालिम' को
इक 'अवस्थी' है इक 'मनोज अज़हर'
इनको दे देना एक इक चादर
शै ये हरगिज़ न ग़ैर को देना
बैद 'अहमद उज़ैर' को देना
मुस्तहिक़ थे 'शमीम फ़ारूक़ी'
लेकिन 'अन्जुम' को देना बैसाखी
फेंकना मत लिहाफ़ो कम्बल को
भेज देना 'रईस ओ घाइल' को
इक खटोले के चार हैं पाये
दो 'किरन' दो 'अलीना' ले जाये
'शारिक़ ओ साजिद' अब भी छोटे हैं
उनके हिस्से में दो दो लोटे है
हक़ है 'मसऊद' का रिसालों पर
और 'मीनू' का हक़ किताबों पर

है ख़्याल अब 'अमीम' बेटे का
उसको लालच नहीं है पैसे का
मैंने अच्छे बुरों को छाँट दिया
जो भी था पास अपने बाँट दिया
और भी रह गए हैं कुछ बच्चे
मिल न पाए थे जिनके डी.एन.ए.
जब वो पूछेंगे तब बुरा होगा
चील के घोंसले में क्या होगा
हक़ मिलेगा उन्हें भी आइन्दा
काश 'अब्बा' अगर रहा ज़िन्दा

रुबाई

गुमराह ज़हीनों को उठा ले अल्लाह
गुस्ताख़, कमीनों को उठा ले अल्लाह
ये बोझ हैं धरती के हमें है मालूम
तू ऐसे मकीनों को उठा ले अल्लाह

ग़ज़ल

कामयाबी के सभी हीले, हवाले चाहिये
आदमी को सोने चाँदी के प्याले चाहिये
कर रहा है कौन सूखी रोटियों पर इक्तिफ़ा
सबको दस्तरख़्वान पर ख़ुश तर निवाले चाहिये
पूछता है कौन सूती और खादी के लिबास
अतलसो कमख़्वाब के सबको दुशाले चाहिये
दोस्ती करना हिमाक़त है किसी 'बे कार' से
दोस्त रिश्तेदार भी अब 'कार' वाले चाहिये
दिलनशीं बीवी मिले और ख़ूबसूरत सालियाँ
ख़ुश्र दौलत मन्द और अय्याश साले चाहिये
सोचते हैं इस तरह दे देंगे धोका मौत को
उम्र अस्सी हो चुकी पर बाल काले चाहिये
हैसियत बदली तो बदले घर की कुछ बदसूरती
चुलबुली हों वालिदा,' अब्बा' निराले चाहिये

"मयंक अवस्थी"
"रिज़र्व बैंक अधिकारी"
तिलक नगर, कानपुर–208002

अब्बाजान.... (मुअजज़ह जो हुआ)

बात तब की है जब फ़ेसबुक पर 'शायिर कलब' का जुनून परवान चढ़ रहा था और सहीह कहा जाए तो परवान चढ़ चुका था और इसकी सैचूरेशन स्टेज पर आ चुकी थी, हर अच्छे ग्रुप में एक स्थिति ऐसी आती है जब सदस्यों की प्रवृति लगाम के बाहर होने लगती है, कजबहसी और कमज़ोर ग़ज़लें भी ज़रूरत से ज़ियादा SPACE घेरने लगी थीं, और इस कलब के एडमिनिस्ट्रेटर ग्रुप को भी किसी बड़े साये की तलाश थी जोकि हालात पर क़ाबू कर सके और कलब की साख को बरक़रार रख सके। शायिरी अराजक हो रही थी, अनायें टकरा रही थीं, निजी तअल्लुक़ात का हर्ज न हो इस लिए कामिल शायिर भी खरी कहने और लिखने से परहेज़ कर रहे थे, ऐसे में लाइट मूड में संजीदा और गहरी बात कहने वाले की सख़्त ज़रूरत महसूस की जा रही थी कि किसी मुअजज़े के सबब ''अब्बाजान'' कलब में नुमायाँ हुए और छा गए, 'अब्बाजान' की आई.डी. तीरगी में रोशनी की लकीर से बनी पेन्टिंग थी, जिसके बिन्दास और संजीदा, बेख़ौफ़ और पुरअसर बयानात चन्द दिनों में ही सबकी ज़बान पर चढ़ गए, कहना नहीं होगा कि शायिर कलब की रौनक़ न केवल लौट आई वरन पहले से ज़ियादा बढ़ गई, ये 'अब्बाजान' आज हमें दिलो जान से प्यारे हैं और कलब की शान और जान दोनों ही हैं और आज 'अब्बाजान' की लोकप्रियता का ये आलम है कि इन्टरनेट पर तो इनकी बादशाहत है ही लेकिन आज हर मुशायरे और नशिस्त में भी इनके शेअर QOUTE किए जाते हैं।

हो भी सकती है मौथरी तलवार — चुन न लेना कहीं नियाम ग़लत
लफ़्ज़ इक एक तौल लेता हूँ — होगा जुमला न इक ग्राम ग़लत
फ़स्ल कब उगती है बंजर खेत में — क्यूँ चलाए जा रहे हो इस पे हल
बैट्री हो गई डिस्चार्ज जब इक आशिक़ की — कैसे मुमकिन है शब ए वस्ल चराग़ाँ होना
जिन्न शायद कोई निकल आए — घिस रहा हूँ हिला हिला के चराग़

लाख क़यास लगाए दोस्तों ने कि 'अब्बाजान' आख़िर किसके दिमाग़ की उपज है लेकिन जब तक ख़ुद 'अब्बाजान' ने निजी तौर पर ये पर्दा नहीं उठाया कि वे ही दरअस्ल 'अब्बाजान' हैं तब तक पूरे दअवे और यक़ीन के साथ कोई नहीं कह पाया कि 'अब्बाजान' कोई और नहीं जनाब सालिम शुजा अन्सारी साहब हैं। ये राज़ उन्होंने सिर्फ़ चन्द दोस्तों

खुजली

क्या बताऊँ मैं तुम्हें हाल जो अब मेरा था
इक मुसीबत ने अचानक ही मुझे घेरा था
कौन जाने ये मरज़ था या किसी की साज़िश
जिस्म में चारों तरफ़ फैल गई थी ख़ारिश
हाथ बेसाख़्ता खुजली की जगह जाता था
सर ख़िजालत से सरे आम झुका जाता था
शहर के ढेरों तबीबों को दिखाया सालिम
एक कमबख़्त मगर काम न आया ज़ालिम
एक मुख़्लिस ने ये तजवीज़ बताई आख़िर
हौम्योपेथ मुआलिज हैं जनाबे 'साबिर'
ठीक कर देंगे तुम्हें उनको दिखा दो जाकर
देख लो तुम भी ज़रा उनकी दवाऐं खाकर
सुनके तजवीज़ मैं जब उनके मतब पर पहुँचा
क़िस्सा ए ज़ोर ए मरज़ ओज ए ग़ज़ब पर पहुँचा
मेरे हालात मुआलिज ने अदब से सुनकर
दीं दवाओं के ज़ख़ीरे से दवाऐं चुनकर
क्या कहूँ आपसे हालत जो हुई शायिर की
बढ़ गया और मरज़ खाके दवा साबिर की

एक पल के लिए आराम नहीं था हासिल
अपने नाख़ुन ही किए देते थे ख़ुद को घाइल
कभी दाऐं,कभी बाऐं,तो कभी ज़ेरो ज़बर
फ़ुरसतें हाथ को मिलती ही नहीं थीं पलभर
अलग़रज़ खाके दवा हाल भी जस के तस थे
हाथ दो... और खुजाने के ठिकाने दस थे
कैसे..जाँ, आफ़ते जाँ से मैं छुड़ाऊँ अपनी
क्यूँ न रुदाद मुआलिज को सुनाऊँ अपनी
मुझ पे जो गुज़री थी..वो मैंने बताया उनको
मेरी हालत पे तरस फिर भी न आया उनको
बोले वो हँस के 'मियाँ लुत्फ़ उठाते रहिऐ'
दोनों हाथों से युँही जिस्म खुजाते रहिऐ
शायिरी करते रहोगे..तो रहेगी खुजली
'शायिरों की न मिटी है न मिटेगी खुजली'

(मज़कूरा डाक्टर साहब खुद एक बहतरीन शायर हैं और मेरे अज़ीज़ भी)

रुबाई

बीमार कर ऐसे कि बदन तक सड़ जाऐं
शर्मिन्दा हों ऐसे कि ज़मीं में गड़ जाऐं
अल्लाह जहन्नम में इन्हे पहुँचाना
जो लोग मिरी ग़ज़लों के पीछे पड़ जाऐं

ग़ज़ल

इक दो नहीं हज़ारों परिस्तार देखकर
हैराँ हैं लोग मेरा जनाधार देखकर
तीरो तुफंग,ख़ंजरो तलवार देखकर
डरता नहीं हूँ मैं कभी हथियार देखकर
दस बीस के लिए तो अकेला ही हूँ बहुत
करना मुख़ालिफ़त मिरी सौ बार देखकर
कालिख किसी ने क्या तिरे चेहरे पे पोत दी
मूँह फेरता है किस लिए ऐ यार देखकर
हैं मेरे दुश्मनों से ज़ियादा हिमायती
जुड़ते हैं लोग मुझसे मिरा प्यार देखकर
पहचान लूँगा तुझको हज़ारों की भीड़ में
ऐ जाने आरज़ू तिरी शलवार देखकर
बहरूपिए भी होते हैं साधू के भेस में
धोका न खाना चोटी ओ ज़ुन्नार देखकर
नादीदा लोग ऐसे भी होते हैं रोज़ादार
टपकाऐं लार अपनी जो अफ़्तार देखकर
अश्आर कह तो सकते हैं कहते नहीं मगर
शागिर्द मुझको अपना मददगार देखकर
करते हैं लोग तुम को नमस्कार दूर से
'अब्बा' तुम्हारे फ़न का चमत्कार देखकर

ग़ज़ल

जल भुन गया हूँ तेरी नई कार देखकर
"जी ख़ुश हुआ है राह को पुरख़ार देखकर"
'सालिम' तिरे कलाम की अब क्या मिसाल दूँ
हैरत ज़दा हैं सब तिरे अश्आर देखकर
उस्ताद भी दबाते हैं दाँतों में उँगलियाँ
'संजय' तुम्हारी ग़ज़लों का मअयार देखकर
'आदिक' तुम्हारे फ़न का मैं क़ायल हूँ इस क़दर
मिलता है चैन तुमको मिरे यार देखकर
आती है याद 'मीर' की बेसाख़्ता मुझे
'मसऊद' जैसा ख़ूबरू अत्तार देखकर
तल्ख़ी तिरे कलाम की भाने लगी 'हुमा'
मोहित हुआ हूँ मैं तिरा व्यवहार देखकर
'हादी' ग़ज़ल तुम्हारी फ़क़त ठीकठाक है
जी ख़ुश नहीं हुआ तुम्हें इस बार देखकर
'सरवत' कई दिनों से नज़र आ नहीं रहे
हर शख़्स ख़ुश है उनको तड़ीपार देखकर
अपनो को बाँटते हैं यहाँ अपने रेवड़ी
मुँह देखता ही रह गया हक़दार देखकर
हफ़्ते के बाद 'अब्बा' ज़रा फ़ुरसतें मिलीं
मैंने भी ठोंक दी ग़ज़ल इतवार देखकर

ग़ज़ल

साँप का बिल है आपकी चौखट
मौत की सिल है आपकी चौखट
अज़दहों की पनाह गाह है ये
जा ए क़ातिल है आपकी चौखट
दर जो बे क़ुफ़्ल हैं बहुत दिन से
उनमें शामिल है आपकी चौखट
पाँव रक्खा नहीं किसी ने कभी
ला मुदाख़िल है आपकी चौखट
रोज़ फ़ितनों को जन्म देती है
उम्म ए बातिल है आपकी चौखट
नाव इज़्ज़त की डूब जाती है
ऐसा साहिल है आपकी चौखट
पार पाना बहुत ही मुश्किल है
ऐसी मुश्किल है आपकी चौखट
देखने वाला होश खो बैठे
रौल मॉडिल है आपकी चौखट
देखो... जी चाहता है फिर देखो
'अब्बा' झिलमिल है आपकी चौखट

ग़ज़ल

जिस्मे बेगम पे चढ़ा है जो वरम आप से आप
बैठे बैठे ही हमें हो गया ग़म आप से आप
क्या पता कौन सी हम ने उन्हें ख़ुशियाँ दे दीं
किस तरह हो गयीं बोतल से ड्रम आप से आप
मूँग दलती हैं हमाँ वक़्त मिरी छाती पर
देखना ज़िन्दगी हो जाएगी कम आप से आप
लज़्ज़ते वस्ल तो क्या,हाथ से छूना मुश्किल
पास आते ही निकल जाता है दम आप से आप
रोज़ करतीं हैं वो मजबूर क़दम बोसी पर
रोज़ झुक झुक के कमर हो गई ख़म आप से आप
हाथ फेरा ही था तस्वीर ए मधुबाला पर
पड़ गया गाल पे इक दस्ते करम आप से आप
अपनी रूदाद जो लिखने का ख़्याल आता है
लड़खड़ा जाता है काग़ज़ पे क़लम आप से आप
हाथ आ जाती है जब भी कोई रंगीं 'तितली'
बूढ़े हाथों में भी आ जाता है दम आप से आप
बेटा 'अब्बा' को दिखा लाया है डर्टी पिक्चर
'अब्बा' खो बैठे तक़दुस का भरम आप से आप

ग़लत फ़हमी

हाल ए दिल क्या तुम्हें बताऊँ मैं
कल की रूदाद क्या सुनाऊँ मैं
वाक़अह कल जो पेश आया था
उसने दिल को बहुत दुखाया था
वो हुआ यूँ..कि वक़्त ए शाम हुआ
रोज़ मर्रह का ख़त्म काम हुआ
मैंने सोचा कि जाएज़ा ले लूँ
अपनी ग़ज़लों पे तब्सिरा देखूँ
ज्यूँ ही खोला था मैंने कम्प्यूटर
आसमानों पे बज गया हूटर
ख़ौफ़े अब्रे सियह की आहट से
दिल लरज़ उट्ठा गड़गड़ाहट से
आ गई इतनी ज़ोर से बारिश
दिल की दिल में ही रह गई ख़्वाहिश
फिर धमाके से गुल हुई बिजली
गोया धड़कन ही रुक गई दिल की
सोचा बिजली का इन्तिज़ार करूँ
या चराग़ों पे इन्हिसार करूँ

रात इस कशमकश में ही गुज़री
सुब्ह तक आ न पाई थी बिजली
राब्तह इस सबब से टूट गया
तुम ये समझे मैं तुम से रूठ गया
मुन्हसिर तुम पे है मिरे बच्चो
दो सज़ाऐं मुझे या तुम बख़्शो
आक़ कर दो या ताक़ तुम जानो
अपने अपने निफ़ाक़ तुम जानो
चाहते हो जो मुनहमिक मुझको
भेज दो लेपटॉप इक मुझको
फिर ये 'अब्बा' कहीं न जाएगा
जब भी देखो,नज़र ही आएगा

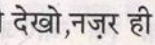

रुबाई

तन्हा हूँ मैं कोई भी मिरे साथ नहीं
अब इतनी भी मशकूक मिरी ज़ात नहीं
मर्दों के कभी मुँह नहीं लगता 'अब्बा'
औरत के लिए ऐसी कोई बात नहीं

फ़रमाइश

नेक किरदारो नेक नीयत ढूँड
यार मेरे लिए भी 'औरत' ढूँड
ढूँड ऐसी कोई रफ़ीक़ ए हयात
जो दिला दे मुझे ग़मों से निजात
गुज़रें आराम से मिरे दिन रात
हमनवा,हम मिज़ाजो फ़ितरत ढूँड
यार मेरे लिए भी 'औरत' ढूँड
मलका ए हुस्ने लाज़वाल हो वो
क़द्दो क़ामत में बे मिसाल हो वो
ख़ानादारी में बाकमाल हो वो
पैकरे चाहतो शराफ़त ढूँड
यार मेरे लिए भी 'औरत' ढूँड

दिलनशीं दिलरुबा हो माहजबीं
उसके जैसा न हो कोई भी कहीं
वो हो रश्के फ़लक तो फ़ख़रे ज़मीं
ऐसा शहकारे दस्ते क़ुदरत ढूँड
यार मेरे लिए भी 'औरत' ढूँड

जिस्मे मरमर से ख़ुश्बूऐं फूटें
गुन्चह ओ गुल भी छातियाँ कूटें
देखकर जिसको डालियाँ टूटें
मौसमे गुल बहारे रहमत ढूँड
यार मेरे लिए भी 'औरत' ढूँड

तल्ख़ियों में भी कुछ हिलावत हो
जज़्बा ए शौक़ में हरारत हो
शोख़ियों में दबी शरारत हो
इक बला ख़ेज़ी ए क़यामत ढूँड
यार मेरे लिए भी 'औरत' ढूँड

जश्न फिर होगा इक अज़ीमुलशान
होंगे शायर कवी सभी मेहमान
अक़्दे सानी करेंगे 'अब्बाजान'
एक क़ाज़ी बराए सुन्नत ढूँड
यार मेरे लिए भी 'औरत' ढूँड

तक ही महदूद रखा। ये एक बड़ी कामयाबी भी है क्योंकि 'शायिर कलब' में बयान की ख़ुश्बू से शेअर किसका है ये पहचानने वाले बहुत हैं,फिर भी 'सालिम शुजा' साहब ने 'अब्बाजान' के किरदार में वो अनासिर डाले जो सालिम शुजा से मुख़तलिफ़ भी थे और दोनों में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ भी था। इसलिए ये भी सच है कि दौरे हाज़िर के मसाइल और ग़मों का एक निशातिया दरमाँ अवाम को मुहैय्या कराने के लिए सालिम शुजा ने ख़ुद को तक़सीम कर दिया और इसके लिए उन्होंने एक किरदार की आई.डी. बनाई जो आज 'अब्बाजान' के नाम से हज़ारों के दिलो ज़हन पर तारी है।

मेरी नज़र में ख़ुद को तक़सीम करना दुनिया का सबसे मुश्किल काम है और इसे मैं शहादत की श्रेणी में रखता हूँ। हम आप सब अपनी पहचान के लिए जीते हैं अदब भी बड़े भारी अल्फ़ाज़ के बावजूद इस ऐब से बाहर नहीं है, शायिर रिवायत के चलते ख़ुद को ख़ाकसार और नाचीज़ कहते हैं लेकिन आप अगर किसी से कह दें कि हाँ जनाब आप तो वाक़अई ख़ाकसार और नाचीज़ हैं तो शायद आप तअज्जुब करेंगे,कि गाली देने के मुआमले में भी बहुतेरे शायिर ज़माने के सबसे गंवार और अशिक्षित तबक़े के उस्तादों को पीछे छोड़ने की कुव्वत रखते हैं,तर्क बहुत स्पष्ट है कि उनका सर उठाना और झुकाना अपनी अना की पैरवी और परसतिश के सबब होता है,ऐसे में कोई अपनी पहचान के बाहर जीने के लिए राज़ी हो जाए और वो भी अदब के प्रति अपने समर्पण के कारण, नशिस्त की रौनक़ बरक़रार रखने के लिए,हँसी बाँटने के लिए, तो उसे आप महान ही कहेंगे। सालिम शुजा वाकअई महान हैं,सिर्फ़ इस लिए नहीं कि उन्होंने अदब की ख़ातिर एक अर्से तलक ये शहादत दी बल्कि इस लिए भी कि 'अब्बाजान' नाम का जो शहकार उन्होंने गढ़ा है वो वास्तविक सालिम शुजा की परछाई से भी मेल नहीं खाता, कहाँ दौरे हाज़िर के मसाईल के ज़लज़लों में..... 'पलकों पर ठहरे हुए अश्क को ठेस न लग जाए'...इस लिए मअसूम और नाज़ुक, फ़िक्र की ग़ैर आबाद गहराई में उतर कर अल्फ़ाज़ को जदीद और पुरअसर मआनी देने वाली सालिम शुजा की ग़ज़ल और कहाँ 'अब्बाजान' के बिन्दास बोल वाली गुदगुदाती, हँसाती और माथे की शिकन को मिटाने वाली ग़ज़लें। शायिरी अगर फ़न है तो फ़नकार की सामर्थ्य और सीमा क्या हो सकती है.....'अब्बाजान' का किरदार गढ़ कर सालिम शुजा साहब ने ये सिद्ध कर दिया है कि वो एक ऐसे फ़नकार हैं जिसके पास मुअजज़ा कर दिखाने की सामर्थ्य है और उनकी सामर्थ्य असीमित है, क्यूँकि एक ही फ़न कार दो निहायत मुख़तलिफ़ किरदारों को जी रहा है जिन में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है या ईमान से कहूँ तो 'अब्बाजान' और 'सालिम शुजा' में दो मुख़तलिफ़ आसमानों का फ़र्क़ है। उन्होंने एक पुरानी कहावत को चरितार्थ कर दिया है कि 'जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि' एक ही तरही मिसरे पर कही गई सालिम शुजा की ग़ज़लें अरूज़े फ़िक्रो फ़न का नायाब नमूना होती है इसी तरही मिसरे पर कही गई 'अब्बाजान' की ग़ज़लें भी अरूज़े फ़िक्रो फ़न का नायाब नमूना होती हैं लेकिन इन दोनों ग़ज़लों के लहजे और असर में

आख़िरी तख़लीक़

(इन्टरनेट के माहौल से दिल बर्दाश्ता होकर)

मिरी 'शायिर कलब' में आख़िरी तख़लीक़ हाज़िर है
इसे पढ़कर समझ लेना कि 'अब्बा' कैसा शायिर है
मुफ़ाईलुन....मुफ़ाईलुन....मुफ़ाईलुन....मुफ़ाईलुन
ये है "बहर ए हज़ज सालिम मुसम्मन" ए सुख़नवर सुन
दुखाया है मिरा दिल इस कलब की एक औरत ने
किया है नज़्म कहने पर मुझे आमादा ग़ैरत ने
यहाँ जो मैंने देखा है, उसी को नज़्म करता हूँ
बस इसके बअद तुमसे हर तअल्लुक़ ख़त्म करता हूँ
चलो ये मान भी लो तुम, मिरी पहचान फ़र्ज़ी है
मगर मैं तुम पे ज़ाहिर हूँ , न हूँ , ये मेरी मर्ज़ी है
ये मेरा वस्फ़ है लोगो, मैं जो कहता हूँ करता हूँ
मैं इस माहौल को जब देखता हूँ, आह भरता हूँ
यहाँ अहले हुनर हज़रात की इज़्ज़त नहीं होती
यहाँ उस्ताद शोअरा की कोई हुरमत नहीं होती

बुज़ुर्गों की यहाँ अनदेखियाँ होने लगीं अक्सर
अरूज़ो फ़न से भी अठखेलियाँ होने लगीं अक्सर
सुख़नवर जितने हैं गुफ़्तार के माहिर ज़ियादा हैं
यहाँ शोअरा हैं कम, ख़ुदसाख़्ता शायिर ज़ियादा हैं
और उस पर ये सितम जुहला को भी शायिर समझ लें हम
फ़ने शेअरो सुख़न में कामिलो माहिर समझ लें हम
हम अन्धे तो नहीं जो दाद दें बे हूदा शेअरों पर
करें हम किस लिए इक 'वाह' भी आलूदा शेअरों पर
अदब की बज़्म में बेहूदगी का दौर दौरा है
कोई तुक बन्द है शायिर, कोई शायिर छिछोरा है
जिसे देखो उठा कर मुँह चला आता है महफ़िल में
ग़ज़ल बे वज़्नो बे बहरी लगा जाता है महफ़िल में
फ़क़त दस बीस हैं जो शायिरी का फ़हम रखते हैं
वगरना दूसरे तो बस गुमानो वहम रखते हैं
यहाँ शेअरो सुख़न का ज़िक्र क्या इक मौजमस्ती है
पसे पर्दा इस "इन्टरनेट" पर पस्ती ही पस्ती है
हज़ारों औरतें तफ़रीहे इन्टरनेट करती हैं
सुलाकर शौहरों को दूसरों से 'चैट' करती हैं
बहाना मर्द भी करते है अक्सर काम होने का
कि बेसब्री से रस्ता देखते हैं शाम होने का
यहाँ फ़ैज़े अदब के नाम पर तफ़रीह होती है
यहाँ तख़रीब कारों की कहाँ तसहीह होती है

अदाकारों की तस्वीरें लगाकर मुँह छुपाते हैं
कहीं के हैं, पता लेकिन कहीं का ये बताते हैं
जो राज़ ए ख़ास होता है उसी को आम करते हैं
ये अहमक़ ख़ुद ही अपने आपको बदनाम करते हैं
रिवायत पर यहाँ हर रोज़ कोई वार होता है
नई कुछ बिदअतों का खुल के अब प्रचार होता है
यहाँ मजरूह होते हैं उसूलों के बदन अक्सर
कि नौचे जा रहे हैं ज़ाब्तों के पैरहन अक्सर
जहाँ लाज़िम है कुछ कहना वहाँ कुछ कह नहीं सकता
तो फिर ऐसी जगह 'अब्बा' तुम्हारा रह नहीं सकता
मैं जाता हूँ तुम्हारी बज़्म से अब हौसला रक्खो
ख़ुदा हाफ़िज़ मिरे बच्चो, ख़ुदा हाफ़िज़ मिरे बच्चो,

रुबाई

हर वक़्त लड़ाते हैं ये पन्जे अट्ठे
डाले हैं शराफ़त के गले में पट्टे
इस मुल्क के नेता सभी इक जैसे हैं
सब एक ही थैली के हैं चट्टे बट्टे

ग़ज़ल

आदमी बिन ये स्त्री क्या है?
स्त्री बिन ये आदमी क्या है?
इक विधुर का भी कोई है जीना
एक विधवा की ज़िन्दगी क्या है?
हम से पूछो फ़िराक़ के मअनी
हम बताऐंगे बेबसी क्या है?
ठीक से पेट अब नहीं भरता
और ये क़ब्ज़े दायमी क्या है?
हम चबा जाऐं पूरे बकरे को
चाँप क्या, रान क्या, सिरी क्या है?
देखते तुम जो मेरा दौरे शबाब
ख़ुद बख़ुद बोलते 'खली' क्या है?
तुम मिरा एहतराम करते हो
फिर बताओ ये दिल्लगी क्या है?
मौत ही मेहरबान है 'अब्बा'
वरना औक़ाते ज़िन्दगी क्या है?

ग़ज़ल

कब से लगा हुआ हूँ मुसलसल जुगाड़ में
सूराख़ कर न पाया अभी तक किवाड़ में

मुद्दत हुई है देखे हुए रौनक़े हयात
कब से सज़ा सी काट रहा हूँ तिहाड़ में

शब भर कुछ इस तरह से बदलता हूँ करवटें
जैसे घुसे हों सैंकड़ों खटमल निवाड़ में

जो काम पहले ख़ौफ़े जहाँ से न कर सका
करना है अब वो काम शराफ़त की आड़ में

लगता है ख़त्म होंगे नहीं ता दम ए हयात
भट्टी में जाऐं रंज तो ग़म जाऐं भाड़ में

सब ने बना दिया है उसे राई से पहाड़
खोदा अगर तो निकलेगी चुहिया पहाड़ में

होगा सवारे दोश तो खींचेगा बाल ही
करता है बदतमीज़ियाँ बच्चा भी लाड़ में

'अब्बा' तुम्हारी कल भी सदा हौलनाक थी
दहशत वही है अब भी तुम्हारी दहाड़ में

ग़ज़ल

हो गई है ख़त्म परदारों की भीड़
आसमाँ पर अब है तैय्यारों की भीड़
अब तो पैदल भी निकलना है मुहाल
हर तरफ़ है मोटरों,कारों की भीड़
अब कहाँ महफ़ूज़ हैं ये लड़कियाँ
शहर में रहती है ख़ूँख़्वारों की भीड़
क्या पता लुट जाए कब इज़्ज़त कोई
हर क़दम पर है हवस कारों की भीड़
इक के ऊपर इक मकाँ बनने लगे
तह ब तह है आज परिवारों की भीड़
औरतें घर में अगर रहने लगें
ख़त्म हो जाऐगी बाज़ारों की भीड़
हाथ में कासा थमा देंगी तिरे
उर्स, मेलों और त्यौहारों की भीड़
कौन अब सुनता है तूती की सदा
हर तरफ़ है आज नक़्क़ारों की भीड़
इक पुराना पेड़ क्या सूखा जनाब
आ गई घर तक लकड़हारों की भीड़
लग रहा है आख़िरी वक़्त आ गया
बढ़ गई 'अब्बा' तिरे प्यारों की भीड़

ग़ज़ल

देखकर मेरी ग़ज़ल 'शौक़' का हैराँ होना
और 'सरवत' का यूँ अंगुश्त ब दन्दाँ होना
एक तकनीक ज़माने में नई आई है
जिस से मुमकिन हुआ मर्दों के लिए माँ होना
वो अच्छा है 'नवेद' और नहीं है 'आदिक'
वरना आसाँ न था दोनों का ग़ज़लख़्वाँ होना
ये ग़नीमत है 'मयंक' आए नहीं महफ़िल में
उनको मन्ज़ूर न था अपना पशेमाँ होना
रास आता नहीं 'आज़म' को किसी भी सूरत
ख़ुद से बढ़कर किसी शायिर का सुख़नदाँ होना
देके मिसरा कहाँ ग़ायब हैं जनाबे 'सालिम'
जिनको मक़सूद था हम सब का परीशाँ होना
नागवार आज भी गुज़रा है दिले 'असलम' को
मिसरा ए तरह पे 'अब्बा' का ग़ज़लख़्वाँ होना

ग़ज़ल

बस कि लाज़िम था मिरी मौत का सामाँ होना
मेरा लाग़र मेरी बीवी का पहलवाँ होना
किस अज़ीयत से मिरी हड्डियाँ टूटीं अबके
उनसे महंगा पड़ा फिर दस्तो गिरेबाँ होना
बनके आतिश फ़िशाँ वो उनका उठाना लाठी
और इन नातवाँ टाँगों का वो लरज़ाँ होना
बैट्री हो गई डिस्चार्ज जब इक आशिक़ की
कैसे मुमकिन है शबे वस्ल चराग़ाँ होना
मेरी जानिब से कोई पूछे मिरी बेगम से
क्या ख़ता है किसी औरत पे महरबाँ होना

रुबाई

चार काफ़ियों का इल्तिज़ाम

हर गाम में पंगे हैं तुम्हारे अजदाद
दुश्नाम में चंगे हैं हमारे उस्ताद
'अब्बा' ये है मुश्तरका विरासत अपनी
हम्माम में नंगे हैं ये सारे नक़्क़ाद

''बच्चों के लिए नज़्म''

अकबर और बीरबल

(ये नज़्म कई मुअतबर रसायल की ज़ीनत बनी)

सुन लो बच्चो इक मज़े का वाक़अह
ग़मज़दा बैठे थे अकबर बादशाह
बीरबल ने जब ये देखा माजरा
पूछा ऐ ज़िल्ले इलाही क्या हुआ
बोले अकबर तुम को है कुछ भी ख़्याल
क्या हैं अपनी सलतनत के हाल चाल
देखो तो जाकर नज़ारे शहर में
कितने कौअे हैं हमारे शहर में
बीरबल ने सुन के अकबर का सवाल
सोचा ये है दुश्मनों की कोई चाल
बोले, हज़रत ! आप मत घबराइए
इस तरफ़ से मुतमइन हो जाइए
जितने कौअे हैं वो सब गिनवाऊँगा
कौओं की तादाद कल बतलाऊँगा

बोले अकबर बादशाह अब जाइऐ
बेश ओ कम इक भी न होना चाहिए
एक भी तादाद से कम हो गया
या ज़ियादा कोई इक कौआ हुआ
जिस्म की सब खाल खिंचवा लूँगा मैं
मार कर जंगल में फिंकवा दूँगा मैं
बीरबल बोले- मुझे मंजूर है
मरहबा- जो आपका दस्तूर है
सुब्ह अगले दिन उसी दरबार में
बीरबल आए सुबुक रफ़्तार में
पूछा अकबर ने, हुआ क्या बीरबल
याद है वअदा किया जो तुमने कल
बीरबल बोले मुझे सब याद है
पेशे ख़िदमत कौओं की तादाद है
एक इक कौआ किया मैंने शुमार
शहर में कौऐ हैं कुल सत्तर हज़ार
बोले अकबर, बढ़ गया कौआ कोई
या कि फिर गिनती में कम बैठा कोई
याद है तुम को हमारा फ़ैसला
हो न जाना तुम सज़ा में मुब्तिला
बीरबल ने झट दिया उनको जवाब
आप तो नाहक़ परीशाँ हैं जनाब

उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव का फ़र्क़ होता है, एक आपको रुला देता है तो दूसरा आपको हँसा देता है, एक ही ज़मीन पर कहे गए इन दोनों ध्रुवों के शेअर देखिए।

अब्बाजान

इक दो नहीं हज़ारों परिस्तार देखकर हैराँ हैं लोग मेरा जनाधार देखकर
तीर ओ तुफंग,खंजर ओ तलवार देखकर डरता नहीं हूँ मैं कभी हथियार देखकर
दस बीस के लिए तो अकेला ही हूँ बहुत करना मुख़ालिफ़त मिरी सौ बार देखकर
कालिख किसी ने क्या तिरे चहरे पे पोत दी मूँह फेरता है किस लिए ऐ यार देखकर

हो न बीवी बराए नाम ग़लत घर का हो जाएगा निज़ाम ग़लत
हो भी सकती है मौथरी तलवार चुन न लेना कहीं नियाम ग़लत
बात मानोगे औरतों की अगर होगा सबसे दुआ सलाम ग़लत
अब न संभलेगी आप से घोड़ी छोड़ दी आप ने लगाम ग़लत
ईट का दो जवाब पत्थर से लो ग़लत से हर इन्तिक़ाम ग़लत
लोग चेले हैं कंस ओ रावण के हो गए आज राम,श्याम ग़लत
क्यूँ न रंग ए लहू सफ़ेद पड़े लोग खाने लगे तुआम ग़लत
अब पुलिस चौकियों के अन्दर ही "हो रहे हैं तमाम काम ग़लत"
लफ्ज़ इक एक तौल लेता हूँ होगा जुमला न इक ग्राम ग़लत

सालिम शुजा अन्सारी

जिसका सजदा ग़लत क़याम ग़लत बन्दगी उसकी है तमाम ग़लत
मुक्तदी का कुसूर क्या इस में रुख़ बदल ले अगर इमाम ग़लत
हो शुरूआत ही ग़लत जिसकी क्यूँ न हो उसका इख़्तिताम ग़लत
मन्सबे अदलिया पे हैं वो लोग हैं अमल जिनके सुब्हो शाम ग़लत
चन्द अच्छे भी हैं ज़माने में लोग होते नहीं तमाम ग़लत
वक्त फिर मुआफ कर न सका थीं ग़लतियाँ बराए नाम ग़लत
दिल का हर मशविरा दुरुस्त रहा फ़ैसले अक्ल के तमाम ग़लत
दरजनों नेकियाँ भी कीं हम ने सैंकड़ो हो गए हैं काम ग़लत
लोग किस किस पे उँगलियाँ रक्खें हो रहे हैं तमाम काम ग़लत

कहना ग़लत नहीं होगा कि हँसी हमारी आज सबसे अहम ज़रूरत है क्यूँ शायिरों ने ज़िन्दगी के इस मुदावे पर ध्यान नहीं दिया और क्यूँ हमें हँसाने वाले शायिर बहुत कम हुए। इसका जवाब शायद मेरी समझ से यही है कि शायिरों की स्टीरियोटाइप इमेज एक हस्सास तबीयत और अन्तर्मुखी दीदावर की इमेज है वरना महान शायिरों के फ़हरिस्त में सिर्फ़ मीर, सौदा, ग़ालिब और इक़बाल भर के नाम नहीं है, इस फ़हरिस्त में नज़ीर, अकबर, इन्शा और दाग़ भी शुमार हैं जिन्होंने हँसते हँसते वो बात कह दी जो रो रुला कर

आप के ही क्या किसी भी राज में
फ़र्क़ हो जाता है कल और आज में
रोज़ इक होता है 'सालिम' दिन नया
आज इक है,कल है मन्ज़र दूसरा
लोग रिश्तेदारियों में जाते हैं
और रिश्तेदार भी कुछ आते हैं
गिनने वाले किस तरह गिन पाऐंगे
चन्द कौअे यूँ भी घट बढ़ जाऐंगें
बीरबल की ये ज़िहानत देख कर
झुक गई दरबारियों की ख़ुद नज़र
ख़ुश हुआ अकबर भी सच्ची बात से
और नवाज़ा उनको इनआमात से
दर हक़ीक़त ये था हरबा अक़्ल का
देखा बच्चो , कारनामा अक़्ल का

हिन्दी रुबाई

बैठे हैं जो डाले हुए अब तक डेरे
कब तक ये रहेंगे युँही धरती घेरे
यमराज कभी इन पे भी कृपा कर दो
जीवित हैं सभी शत्रु अभी तक मेरे

एक डाक्टर से तँग आकर

तेरे बअद

मुअतदिल होगी ज़माने की हवा तेरे बअद
ख़त्म हो जाऐंगे अमराज़ो वबा तेरे बअद
जितने बीमार हैं बश्शाश नज़र आऐंगे
कौन चूसेगा लहू तेरे सिवा तेरे बअद
लोग उक्ता गऐ खा खा के दवाऐं तेरी
नाम भी कोई नहीं लेगा तिरा तेरे बअद
ख़ौफ़ मिट जाएगा हर ज़हन से बीमारी का
सबको मिल जाऐगी दरअस्ल शिफ़ा तेरे बअद
रोज़ पिलवाया जिन्हें मोठ का पानी तूने
खुल के अब नोश करेंगे वो मठा तेरे बअद
ख़त्म हो जाएगा पाबन्दी ए दस्तूरे इलाज
होगा कुछ और ही जीने का मज़ा तेरे बअद
कौन समझाएगा तफ़्सीले मरज़ लोगों को
किसको झेलेंगे तिरे दोस्त बता तेरे बअद
क़ुफ़्ल पड़ जाएगा इक रोज़ मतब में तेरे
कौन बाँधेगा मरीज़ों को दवा तेरे बअद
ख़ुश लिबासी में नज़र आऐंगे 'अब्बा' सारे
कौन नोचेगा ग़रीबों की क़बा तेरे बअद

''बच्चों के लिए नज़्म''

अय्यार गीदड़

(ये नज़्म भी रसायल की ज़ीनत बनी)

सुन लो बच्चो एक दिन का वाक़अह
इक गुफ़ा में एक बूढ़ा शेर था
कर नहीं पाता था वो हरगिज़ शिकार
भूक से रहता था हरदम बेक़रार
शेर का गीदड़ ही बस ग़मख़्वार था
जिस्म से लाग़र, मगर हुशियार था
शेर ने गीदड़ से सब दुखड़ा कहा
और मदद के वास्ते की इल्तिजा
बोला गीदड़ ग़म नहीं कीजे हुज़ूर
घेर लाऊँगा किसी को मैं ज़रूर
शर्त है लेकिन,मैं जिसको लाऊँगा
पेट भरकर मैं भी उसको खाऊँगा
शेर ने सोचा, चलो ये ठीक है
यूँ भी मुस्तक़बिल मिरा तारीक है

दोनों जानिब से अमल होने लगा
ख़त्म फ़ाक़ों का ज़माना हो गया
रोज़ इक लाता था गीदड़ जानवर
दोनों खाते थे उसे मिल बैठकर
इस तरह गीदड़ मदद करता रहा
पेट दो भूकों का रब भरता रहा
एक दिन जंगल से गुज़रा इक गधा
रास्ते में उसको गीदड़ मिल गया
देखकर इक मोटा ताज़ा सा शिकार
हो गया गीदड़ अचानक बेक़रार
है गधा,अहमक़ उसे मअलूम था
पास जाकर उसने ये जुमला कहा
भाई क्यूँ हैं आप इस दर्जा उदास ?
बिन ब्याही इक गधी है मेरे पास
देखने में ख़ूबसूरत है गधी
पास उसके इक हवेली है बड़ी
उसकी शादी करवा दूँगा आप से
चलके मिल लीजे गधी के बाप से
आ गया गीदड़ की बातों में गधा
साथ ख़ुश होकर वो नादाँ चल पड़ा
दोनों आ पहुँचे गुफा के सामने
दी ख़बर अन्दर ये गीदड़ राम ने

ख़त्म होता है हुज़ूर अब इन्तिज़ार
पढ़ के 'बिस्मिल्लाह' कर लीजे शिकार
सुन के भूका शेर बाहर आ गया
मार कर अहमक़ गधे को खा गया
बच्चों को 'सालिम' यही समझाइए
हमको मक्कारों से बचना चाहिए
अजनबी पर ऐतबार अच्छा नहीं
दूसरों पर इन्हिसार अच्छा नहीं

क़ता

मैं सुख़नवर नहीं हूँ बाज़ारी
मेरे शेअरों में ढूँड तेहदारी
सिर्फ़ इतना मिरा तआरुफ़ है
मैं हूँ 'सालिम शुजाअ अन्सारी'

ग़ज़ल

यूँ दम ब दम मिरी आँखों में झाँकती क्यूँ है
नहीं है कोई ग़रज़ फिर ये दिल लगी क्यूँ है
अगरचह हो गये चालीस साल शादी को
मगर ये शाख़ अभी तक हरी भरी क्यूँ है
जो तुझको मुझसे है नफ़रत तो छोड़ दे मुझको
अगर है प्यार तो फिर दूर भागती क्यूँ है
ज़रा सा छूते ही बेसाख़्ता उछलती है
तिरे ज़ईफ़ बदन में ये गुदगुदी क्यूँ है
बता वो कौन सा सुख है जो दे नहीं पाया
बस एक बार तो कह दे कि तू दुखी क्यूँ है
तिरी मदर का कोई दोस्त जर्मनी था कभी
तिरे मिज़ाज में आख़िर ये हिटलरी क्यूँ है
अनाज फिकता है सड़सड़ के मुल्क में अब भी
मगर हमारे ही घर में ये भुकमरी क्यूँ है
ये बात कोई भी मुझको बता नहीं पाया
"हवा को जलते चराग़ों से दुश्मनी क्यूँ है"
जहाँ भी जाता हूँ हर शख़्स पूछता है यही
तिरे मिज़ाज में 'अब्बा' ये मसख़री क्यूँ है

''बच्चों के लिए नज़्म''

मुर्ग़ और भेड़िया

(ये नज़्म कई मुअतबर रसायल की ज़ीनत बनी)

सुन लो बच्चो तुम कहानी इक नई
इक शजर पर मुर्ग़ बैठा था कोई
सुब्ह सादिक़ दे रहा था वो अज़ाँ
कर रहा था रब की वहदत का बयाँ
पास ही इक भेड़िया बेदार था
भूक की शिद्दत से वो बेज़ार था
भेड़िये ने सुन ली मुर्ग़े की अज़ाँ
एक पल में झट से आ पहुँचा वहाँ
मुँह उठा कर उसने मुर्ग़े से कहा
सुन ली हज़रत मैं ने ये बाँगे दरा
अब ज़रा नीचे उतर कर आइए
और नमाज़े फ़ज्र भी पढ़वाइए
जानता था मुर्ग़ ये मक्कार है
भेड़िया तो फ़ितरतन ख़ूँख़्वार है

बातों बातों में ग़ज़ब ढा जाएगा
नीचे मैं उतरा तो ये खा जाएगा
मुर्ग़ ने फ़ौरन ख़ुदा से की दुआ
ए ख़ुदा तू मुझको ज़ालिम से बचा
सुन ली रब ने मुर्ग़ की ये इल्तिजा
शेर अचानक इक कहीं से आ गया
इक लगाई शेर ने वहशी दहाड़
भेड़िये के सर पे टूटा इक पहाड़
उसने पुछा मुर्ग़ से ये कौन है
है यज़ीदे वक़्त या फ़िरऔन है
मुर्ग़ बोला ये हैं जंगल के इमाम
नाम' ज़ैग़म 'शेर इनका उर्फ़े आम
मुसतनिद इनकी इमामत है जनाब
सारे जंगल में यही है लाजवाब
ये नमाज़े फ़ज्र अदा करवाऐंगे
आप और हम मुक़्तदी बन जाऐंगे
भेड़िये का रंग धानी पड़ गया
हसरतों पर उसके पानी पड़ गया
सर पे रख कर पैर भागा भेड़िया
एक पल में नौ दो ग्यारह हो गया
जाते जाते मुर्ग़ से उसने कहा
हो गया भाई वुज़ू मेरा ख़ता

घर अदा कर लूँगा जाकर मैं नमाज़
फिर कभी पढ़ लूँगा आकर मैं नमाज़
बच गई मुर्ग़े की आख़िर ज़िन्दगी
रख ली रब ने आबरू ए बन्दगी
आदमी दिल से दुआ करता है जब
ग़ैब से 'सालिम' मदद करता है रब

नेतांजलि

भैय्या मेरे देश की, महिमा अपरमपार।
लूले हैं 'नेता' सभी, लँगड़ी है सरकार।।
सम्पत्ती पर देश की, 'नेता' का अधिकार।
खाते स्विटज़रलैण्ड में,सबके हैं दो चार।।
उसका ही प्रचार है, उसका ही प्रसार।
जो 'नेता' इस देश में,कर ले भ्रष्टाचार।।
है 'नेता' के भाग्य में, कोठी बँगला कार।
करता है भगवान भी, इनका ही उद्धार।।
'नेता' की इच्छाओं में, होता है विस्तार।
चरणों में आकाश तो, हाथों में संसार।।
रखते हैं ये भद्रजन, सौ दो सौ हथियार।
जिस पर जब चाहें करें,जितना अत्याचार।।

हिन्दी ग़ज़ल

जब परिस्थिति कोई आ जाए विषम आप से आप
धैर्य करता है हर इक मार्ग सुगम आप से आप
दूसरों के लिए सदभावना रखिए मन में
होगा जीवन में इक आनन्द चरम आप से आप
मोह माया को तजे,त्याग दे तृष्णा मन की
दूर हो जाऐंगे हर कष्ट से हम आप से आप
नाश मानव का अहंकार किया करता है
नष्ट कर देता है साधू को अहम् आप से आप

रुबाई

है लअनतो फटकार ही क़िस्मत 'अब्बा'
क्या हो गई अब मर्द की हालत 'अब्बा'
दुनिया में फ़क़त सलतनत ए औरत है
हर घर में है औरत की हुकूमत 'अब्बा'